रु० 15.00 अंक 11

अप्रैल-सितम्बर, 1997

चन्द्रताल

लाहुल-स्पीति की साहित्यिक-सांस्कृतिक त्रैमासिक

सहकार
विशेषांक

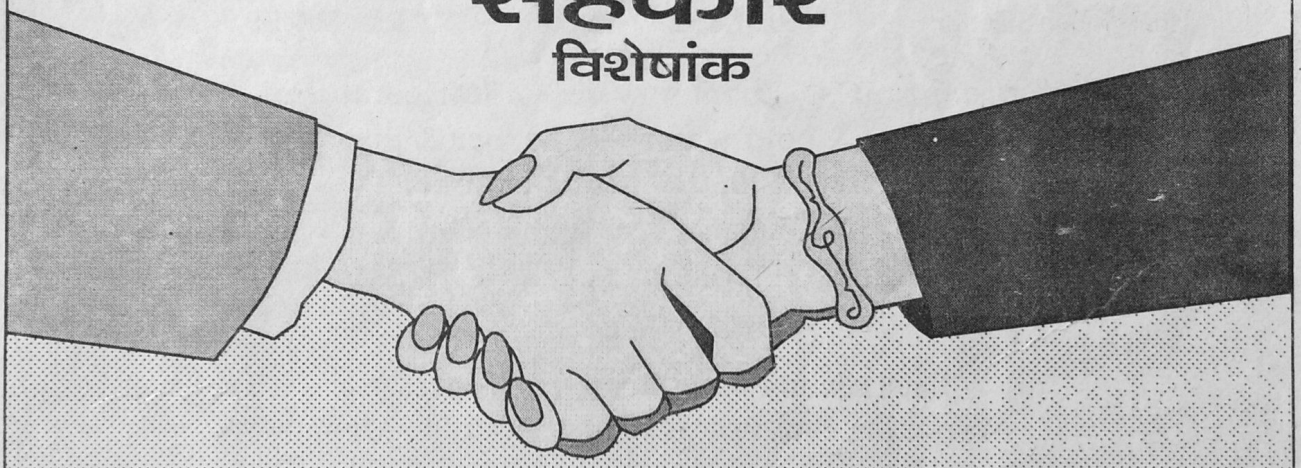

कुल्लू एवं लाहुल स्पीति में सहकारिता के उतार-चढ़ाव

मंगत राम

संस्थापक:
स्वंगला एरतोग,
लाहुल-स्पीति में कला व संस्कृति उत्थान हेतु
सोसाईटी (रजि०) संख्या ल स/42/93
सोसाईटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट 21, 1860.

संपादक:
सुश्री डॉ० छिमे शाशनी

उप संपादक:
बलदेव कृष्ण घरसंगी

संपादक मण्डल:
के० अंगरूप लाहुली
आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा
तोबदन

सम्पर्क:
संपादक - चन्द्रताल
पोस्ट बॉक्स 25, मुख्य डाकघर ढालपुर
कुल्लू-175101 (हि०प्र०) फोन: (01902)-66331

वितरण प्रबन्धक:
रणवीर चन्द ठाकुर, दूकान नं० 19, सामने स्नो व्यू
होटल, मॉडल टाउन, मनाली-175131 (हि०प्र०)

लाहुल में सब्स्कृप्शन व वितरण एजेंट
श्री रूपसिंह वारपा, लक्ष्मी बुक शॉप,
अपर केलंग, लाहुल-स्पीति - 175132

चन्द्रताल त्रैमासिक सहयोग राशि:
वार्षिक : साठ रुपये
एक प्रति : पन्द्रह रुपये

पत्रिका पूर्णत: अव्यावसायिक तथा संपादन व प्रबन्धन अवैतनिक।

स्वंगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक सतीश कुमार द्वारा, नमन, अ०बा० कुल्लू से टाईप सैटिंग तथा मुद्रित एवं नीरामाटी, कुल्लू, हि०प्र० से प्रकाशित।

रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, उनमें संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं।

आवरण, लेआउट और विज्ञापन डिज़ाईन
बलदेव कृष्ण घरसंगी

क्र म

संपादकीय		1
पाठकीय		2
कसौटी		3
सहकार-एक नया आयाम	*बलदेव घरसंगी*	4
कविता		4
रोहतांग बन गया महाकाल	*नीलचन्द 'लाहुली'*	5
उस पार	*हरिसिंह*	5
सखी	*शेखर*	5
कॉलजेट	*सतीश शाशनी*	6
टूटता प्रवाह	*सुरेन्द्र 'सूरी'*	15
तलाश	*एस० क्रोफा*	31
लोक कथा		
बकरी और उसके बच्चों की कथा	*सतीश कुमार*	7
क्षेत्रीय दृष्टि		
मीडिया का आतंक और संस्कृति का ह्रास	*छिमेद दोरजे*	8
लोक गाथा		10
पांच पाण्डुपुत्रों का घुरे-गीत	*के० अंगरूप लाहुली*	
सहकारिता विशेषांक		
कोऑपरेटिव आन्दोलन	*शिव चन्द ठाकुर*	11
संतुलित विकास का आधार	*मनमोहन गौतम*	12
ज़िला कुल्लू एवं लाहुल-स्पीति में सहकारिता के उतार चढ़ाव	*मंगत राम*	14
बे'स्हि: - एक उत्कृष्ट सहकार	*एस० लोनछेन्पा*	16
कुल्लू ज़िला में सहकारिता....	*डा० सूरत राम*	19
भुट्टी वीवर्ज़ सोसायटी	*इन्द्र सिंह ठाकुर*	22
लाहुल आलू सोसायटी पर एक विहंगम दृष्टि	*एक रिपोर्ट*	25
संस्कृति		
योर त्यौहार मनोविश्लेषणात्मक पक्ष	*राजेन्द्र सिंह*	23
शाशुर छेशु में छम	*नोरबु रिनचेन*	29
पर्यावरण		
व्यूंस - लाहुल-स्पीति का कल्पवृक्ष	*अजय ग्यमूरपा*	30
संस्मरण		
एक महान् विभूति से साक्षात्कार	*सोनमदेव ठाकुर*	32
एरतोकि खबर-रे		35

संपादकीय

'चन्द्रताल' का यह अंक सहकारिता विशेषांक के रूप में आप के सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है। इस का उद्देश्य सहकारिता की मूल अवधारणा से परिचय कराना और समाज के उत्थान में सहकारिता की भूमिका का अवलोकन करना है। सहकारिता का अभिप्राय सामान्य हितों की पूर्ति के लिए दो या अधिक व्यक्तियों का मिल कर काम करना ही नहीं, बल्कि नैतिक दृष्टि से समानता और भ्रातृभाव की धारण भी है; जहां सभी व्यक्ति समानता के अधिकारी होते हैं, उन का परस्पर सहयोग से रहना नैतिक धर्म माना जाता है। यह एक ऐसा संगठन है जहां व्यक्ति स्वेच्छा से आर्थिक हितों की पूर्ति के लिए कार्य करता है तथा निजी स्वार्थ भावना से ऊपर उठकर सामूहिक हित चिन्तन ही जहां सर्वोपरि रहता है। यह वह सामाजिक भावना है जो समाज के सर्वांगीण विकास को सुनिश्चित करता है। इसी सम्बल के सहारे लक्ष्यपथ का राही निज लक्ष्य की ओर निरन्तर अग्रसर होता है। जन-जन के लिए बुनियादी सुख सुविधा, अपनत्व की भावना ही सहकारिता की आत्मा है। संयुक्त परिवार प्रणाली इसका जीवन्त उदाहरण है, जहां सांझे हितों की रक्षा के लिए व्यक्तिगत हित को त्याग दिया जाता है। जहां सभी कार्य सहयोग, त्याग, सहनशीलता के आधार पर होते हैं। इस का आधारभूत सिद्धान्त है - 'प्रत्येक सब के लिए, सब प्रत्येक के लिए'। इसी सिद्धान्त के आधार पर ऐसे परिवार में समष्टिभाव का विकास होता है, जहां मृत्यु, दुर्घटना, बीमारी, बेरोज़गारी आदि विपत्तियों में व्यक्ति को अकेलेपन का एहसास नहीं रहता। एक का दु:ख सब के दु:ख में बंट कर सांत्वना पाता है; आत्मबल और धैर्य पा कर साहस से स्थितियों का सामना करने में सक्षम होता है। त्याग, सहनशीलता, परोपकार, कर्त्तव्यपरायणता की भावना का विकास ऐसे परिवार में रहने वालों में सहजता से हो सकता है। परन्तु आज स्थिति बदल रही है। आत्मनिर्भरता, अधिकार-लिप्सा, एकाकी परिवार के प्रति मोह के कारण संयुक्त परिवार टूटता जा रहा है। आज सामाजिक मूल्यों और नैतिक मान्यताओं में भी परिवर्तन आ गया है। आज न तो वे मानदण्ड रहे हैं, न उन मूल्यों के प्रति आस्था दिखाई पड़ती है जो सामाजिक संरचना को आदर्श रूप प्रदान करते थे। यही कारण है कि आज पग-पग पर हमें सामाजिक विसंगतियों और नैतिक मूल्यों के ह्रास का सामना करना पड़ रहा है। ऐसे प्रतिपल विघटित हो रहे मानवीय मूल्यों वाले युग में भावनात्मक एकता का महत्व और भी बढ़ जाता है। सहकारिता ही भावनात्मक एकता का पूरक है। अत: आज के समाज के हर व्यक्ति को कर्त्तव्य समझ कर इस भावना को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। सहकारिता की भावना ही समाज को पुष्पित पल्लवित कर उसे सुवासित और प्राणान्वित कर सकता है। सहकारिता की प्राणदायिनी ज्योति में अपने अस्तित्व और व्यक्तित्व को दीप्त कर ही समग्र मानवता का हित साधन सम्भव है। उपनिषद् का यह मंत्र हमारा प्रेरक बने -

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, या कश्चिद् दुःख भाग भवेत ॥

आठवां व नवां अंक मनभावन रहा। लेकिन आप से एक शिकायत है कि ताबो मठ के सहस्राब्दि समारोह के अवसर पर ताबो मठ के इतिहास तथा समय-समय पर हुए परिवर्तनों का उल्लेख उस अंक के किसी लेख में नहीं मिला। *'लाहुली बोली विलुप्ति की ओर'* लेख लाहुली समाज की एक बहुत बड़ी समस्या की ओर ध्यान आकर्षित करता है। समय के साथ साथ हो रहे परिवर्तनों का हमारी बोलियों पर सीधा प्रहार होता रहा है। अगर हम इन परिवर्तनों को अपनाते रहें तो एक समय हमारी बोलियों का स्वरूप निश्चय ही विचित्र रूप धारण कर सकती है। मूल शब्दों को अधिक इस्तेमाल में न लाएं तो मूल शब्द शीघ्र ही विलुप्त हो जाएंगे। आज एक फैशन या क्रेज़ बन गया है कि किसी भी भाषा या बोली के साथ अंग्रेज़ी या अन्य भाषा के प्रचलित शब्दों का प्रयोग करना।

आज हमें इस दिशा में गम्भीरता पूर्वक एकजुट होकर बोलियों के संरक्षण के बारे समाधान ढूंढना होगा, वरना परिवर्तनों की मार झेल रहीं लाहुली बोलियां विलुप्ति की कागार पर होंगी।

अंत में समस्त चन्द्रताल परिवार को मेरी शुभकामनाएं तथा मै प्रर्थना करता हूं कि चन्द्रताल का प्रकाशन समय-समय पर नियमित रूप से होता रहे।

अजय सिंह,
अप्पर केलंग

मुझे चन्द्रताल नियमित रूप से मिलती है। धन्यवाद। चन्द्रताल को आकर्षक रूप देने और विभिन्न पाठ्य सामग्री इकट्ठा करने तथा इसे रोचक बनाने के लिए मै चन्द्रताल परिवार को बधाई देना चाहता हूं। लाहुल-स्पीति को जनजातीय लोगों में साहित्यिक रुचि जगाने में यह 'संगेमील' सिद्ध हो सकेगी, यह मेरी कामना ही नहीं अपितु प्रार्थना भी है।

मेरी शुभकामना और बधाई सतीश लोप्पा को 'टी सिन्ड्रोम' के लिखने पर। यह सही चित्रण है लाहुल की आज की युवा पीढ़ी का। खैर समय तो बदलता रहता है अपितु हम क्यों न इसे कालचक्र की संज्ञा दें। और इस काल चक्र का प्रभाव देव लोक से लेकर दानव लोक तक पड़ता है। ऐसा भी काल चक्र तन्त्र में कहा गया है। मेरी शुभकामनाएं चन्द्रताल परिवार जनों के लिए, विशेषकर घरसंगी और लोप्पा को।

छेरिङ दोर्जे
गुस्कियर

दसवां अंक हाथ लगा। हमेशा की तरह 'चन्द्रताल' का यह अंक ऐसा बिपार्श्व या प्रिज़्म था, जिसके विभिन्न कोणों से विभिन्न विषयों की पृथक-पृथक विधाओं में लाहुल-स्पीति की उपलब्धियां, समस्याएं एवं चिंतन परावर्तित एवं प्रतिबिंबित हुई। मै 'चन्द्रताल' के नित्य नूतनाम्बुदमयी रहने का श्रेय विद्वान संपादक मण्डल के परिश्रम को देता हूं।

मै तुरन्त कभी प्रशंसा या प्रतिक्रियाएं नहीं भेजता, पर सच मानिए, दसवें अंक के सम्पादकीय ने मन को झकझोर दिया। मै स्वयं भी चिंतन करता हूं कि अहम्बद्ध भेद बुद्धि के कारण समाज (लाहुली समाज भी) मानसिक दिवालियेपन की ओर न बढ़े बल्कि यथार्थ से साक्षात्कार करे। आज हमारे समाज को उचित मार्ग-दर्शन की आवश्यकता है, अतः इस संदर्भ में सम्पादकीय आगे भी सार्थकतम अभिव्यक्ति प्रस्तुत करता रहेगा, ऐसा मुझे विश्वास है। आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा जी द्वारा लोक गाथा 'घुरे' का परिचय जिज्ञासु मन को टॉनिक दे गया। लाहुली लोक साहित्य की बहुमूल्य निधि घुरे से यहां के जन-मानस को पुनः परिचित कराना बिखरे पडे कीमती संगमरमर के पत्थरों से यादगार 'ताजमहल' बनाने के समान कार्य है। इसी संदर्भ में श्री अंगरूप लाहुली जी का भी कृतज्ञ हूं। डॉ॰पी॰डी॰ लाल जी ने हॉप्स 'मार्किटिंग विकल्प' पर प्रकाश डालकर किसानों को नई उर्जा प्रदान की है। यकीनन हॉप्स पुनः लाहुली किसानों की लाडली फसल बनने वाली है।

पाठकीय में निर्मला जी ने चंद लाइनों में बहुत कुछ व्यक्त कर दिया है। यहां मै यह स्पष्ट करता हूं कि चन्द्रताल के आठवें-नौवें अंक में प्रकाशित मेरे लेख ने मुझे युवा पाठक वर्ग के समक्ष आलोचना का पात्र बना दिया है। किन्तु सत्य हमेशा कड़वा लगता है। बात दरअसल निर्मला जी, (एवं अन्य) 'ऐफोर्ड कल्चर' की है। लाहुल के लड़के-लड़कियां महंगे जूते, कपड़े, सिगरेट, सैण्डल एफोर्ड कर सकते है तो उन्हे हम क्यों रोकें? लेखक तो सत्य उजागर करता है, वह निष्पक्ष रहते हुए भी किसी विशेष वर्ग का अहित क्यों सोचे?

राहुल 'लरजे', अमृतसर।

सहकार - एक नया आयाम

भारतवर्ष की आज़ादी की पचासवीं वर्षगांठ के साल में 24 अगस्त 1997 को लाहुल आलू सोसाईटी ने साधारण अधिवेशन में प्रस्ताव द्वारा सभा के सभी सदस्यों को स्वंगला एरतोग द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका *चंद्रताल* का ग्राहक बना कर लाहुल-स्पीति के समाज को एक ऐसा उपहार दिया है जिसकी आने वाले समय में बहुआयामी उपयोगिता सामने आएगी। इस प्रकार की व्यवस्था से न सिर्फ सहकार की भावना ही बढ़ेगी अपितु एक नए अनुभव का उद्भव होगा। यह दो सहकारी संस्थाओं के बीच घटी घटना मात्र नहीं है, अपितु इससे एक नए युग का आरम्भ हुआ है जिसके घटकों में सभी लाहुली कृषक व बागवान परिवार, स्पीति की जनता, भारतवर्ष में विभिन्न संस्थानों व कार्यालयों में कार्यरत, उद्योग धंधों में लगे और शिक्षा ग्रहण कर रहे लाहुल-स्पीति से सम्बन्धित लोग आने वाले समय में एक ऐसे माध्यम से जुड़े रहेंगे जिसका जनाधार उनका अपना होगा, जिसकी मूल भावना उनके आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व शैक्षणिक प्रगति की दिशा में कार्यरत रहना होगा।

आज के इस 'इन्फोर्मेशन टैक्नोलोजी' युग में लाहुल आलू सोसाईटी, लाहुल हॉप्स सोसाईटी और स्वंगला एरतोग सांस्कृतिक सोसाईटी आपसी 'नेटवर्किंग' द्वारा एक दूसरे से सम्बन्धित ज्ञान का आदान-प्रदान ही नहीं अपितु, इस पत्रिका द्वारा एक 'सांझा मंच' तैयार कर लाहुल-स्पीति के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक व शैक्षणिक प्रगति की सम्भावनाओं पर चर्चा हो सकती है और सार्थक निष्कर्षों पर पहुंचा जा सकता है। लाहुल आलू सोसाईटी अपनी अपार क्षमता, लाहुल हॉप्स सोसाईटी अपनी युवा सम्भावनाओं और स्वंगला एरतोग सांस्कृतिक व साहित्यिक आधार के बल पर यदि कोई सामूहिक प्रयास करें तो वह लाहुल स्पीति के आर्थिक व सामाजिक और सांस्कृतिक धरोहर को संजो कर विकासोन्मुख पथ पर ले जाने में निश्चय ही कारगर साबित होगा। परन्तु यह तभी संभव है जब सभी घटक अपनी संस्थाओं के विकास में जुट जाएं और जब 'सांझा मंच' की आवश्यकता पड़े तो एक दूसरे के पूरक बनें। यही सहकार भावना लाहुल-स्पीति से जुड़े हर क्षेत्र की प्रगति के लिए मील का पत्थर साबित होगी।

-बल्देव कृष्ण घरसंगी

रोहतांग बन गया महाकाल

जाने कितने अभागे पथिक,
गंवाते हैं जानें रोहतांग में हर साल।
उठाते हैं नुकसान ट्रक मालिक,
फिर नहीं आते उठाने दोबारा माल।

फिर भी किसी को नहीं है अभी तक,
इतने गम्भीर विषय पर बिल्कुल खयाल
और न जाने क्या क्या होगा,
रहा अगर तो यही हाल

जागो मेरे लाहुली भाइयो,
रोहतांग बन गया है महाकाल

प्रश्न पूछो ज़रा अपने आप से,
कहां गया सुरंग रोहतांग का
हेली-पेड, हवाई पट्टी सब अंधेरे में है,
कब सवेरा होगा हमारी मांग का

अरे कब तक पैदल चलते रहेंगे,
बुढ़ापे में क्या हाल होगा हमारी टांग का
समिति संगठन को संगठित करके,
दिखाना है हमें कुछ कमाल

जागो मेरे लाहुल वासियो,
रोहतांग बन गया है महाकाल

नई युवा शक्ति को आगे लाकर,
होना होगा एक लाहुल-पांगी सारा
देश के स्वस्थ प्रजातन्त्र राज में,
लोकतन्त्र ने ही तो उतारी हमारी खाल

जागो मेरे लाहुली भाईयो,
रोहतांग बन गया है महाकाल

मटर आलू जब तक न फंसे,
तब तक नहीं आएगा हमें होश
अरे सारी गलती तो स्वयं की है,
क्यों देते हैं सरकार को दोष

क्रान्ति से ही मिले शान्ति,
उठाओ हाथ में मशाल
जागो मेरे लाहुल वासियो,
रोहतांग बन गया है महाकाल

क्या फायदा कोकसर मढ़ी में,
बिठा कर हर साल बचाव दल
प्राथमिक चिकित्सा का प्रबन्ध नहीं,
सिवाए पिलाने के ठण्डा जल

ऐसे में मुसीबत आन पड़ती तो,
मौत होगी हमेशा पल दो पल
सारी समस्याओं का एक हल,
सुरंग बन जाए तो होंगे खुशहाल

जागो मेरे लाहुली भाईयो,
रोहतांग बन गया महाकाल!

- नीलचन्द 'लाहुली'

उस पार

सदियों से हो रही है
लाहुल में एक ही चर्चा
सड़कों के टूटने और
दर्रे के बन्द होने का
आलू होप्स के बाद
फ्लाइट शेड्यूल तक
नम्बर लगवाने की बात
कहे कविराज किसान यूनियन से
कुछ तो संघर्ष करो जनाब
फ़रमाये जन प्रतिनिधि
सी०एम० से बात हुई है
निकल रहा है जल्द सुरंग
दो घण्टे में पहुंच जाएगा
रोहतांग के उस पार
सुरंग तो दूर की बात है
हाथ जोड़े कविराज
फ्लाइट में नम्बर लगवा दे
अर्ज़ करे बारम्बार
तीस मिनट में पार लगवा दे
हो जाएगा बेड़ा पार!

-हरि सिंह, केलंग

सखी

तुम आखिर हो क्या
और इतना तो बताओ
मात्र तुम्हारा होना
क्यों बना देता है
मेरे विचारों को
'इतना सुखमय'
क्यों पोंछ दिया करती हो
मेरी आंखों से बहते
इस धुएं को
क्यों समेट लिया करती हो
अपने आंचल में
मेरे होंठों से निकले
'हर ज़हर को'
कैसे कर पाती हो
इतना सब कुछ
और कैसे
इतना कुछ देने के बाद भी
भरा रहता है 'लबालब'
हमेशा तुम्हारा
'स्नेहिल हृदय'।

-शेखर

कॉलजेट

तीन साल में की पास मैट्रिक
समझ कर इसे हैट-ट्रिक।
पास की मैट्रिक

खा कर घर के आलू।
चला कालजेट बनने
चण्डीगढ़ या कुल्लू।

शुरु के साल में
दिया पढ़ाई में ध्यान
दूसरे साल
गया दूसरों पर ध्यान।

चलते है शरीफ़ दुकानदार के पास।
पांच किलो बासमती तोलो लाला
खुलने वाला है किस्मत का ताला।

शाम हुई घुटने लगा दम
कहां से लाऊं अब दम।
पीनी पड़ेगी दारू में रम।

पहले बनते थे वकील या डाक्टर
आज बनते है मुश्किल से कण्डक्टर।
मत दो अपने अनपढ़ बाप को धोखा
साथ में दे रहे हो खुद को धोखा।

घर से जब
आ रहा खर्चा पूरा
फिर क्यों रहूं
दूसरों से अधूरा।

दूसरे पीते है दारू में रम
वह मारता है दम पर दम।

जीन चाहिए बढ़िया पेपे का
बूट पहनिए बढ़िया लोटो का।
कोई फ़िकर नहीं नोटों का
यह हाल आज के बेटों का।

दस दिन है महीने के बाकी
जेब में नहीं है पैसे बाकी।
खर्च दिए चिकन के लिए
उधार मांगता है किचन के लिए।

तार दी फिर *सेन्ड मनी* की
फिर चिन्ता नहीं महीने की।

आज कुछ बचा नहीं है उसके पास।

वक्त देखता नहीं
पीछे मुड़ कर यारो
यही वक्त है
कुछ कर दिखाओ प्यारो।

छोड़ दो तुम
पीना रम, भरना दम
तोड़ दो तुम सभी ऐब यक दम।

क्योंकि ज़माना बदलता नहीं
अपने आप
ज़माने को बदलते है हम
और आप।

पढ़ो सिर्फ तुम अपने मक़सद की खातिर।
कहलाओगे तुम
एक सच्चे कालजेट तब
गर्व से दिखाओगे
बाप को रिज़ल्ट जब

– *सतीश शाशनी, तान्दी*

लेखक बन्धुओ,

जैसा कि आप को ज्ञात है लाहुल स्पीति की लोक कला, साहित्य व संस्कृति को सही रूप में सामने लाने व लुप्त होती लोक विधाओं को संरक्षित करने व पुनर्जीवित करने तथा आस-पास की अन्य हिमालयी संस्कृतियों के साथ तुलनात्मक विवेचना द्वारा आत्म परिष्कार आदि के उद्देश्यों को लेकर "चन्द्रताल" का प्रकाशन आरम्भ किया गया था। सभी लेखक बन्धुओं से आग्रह है कि अपने हर प्रकार के लेख व कोई भी साहित्यिक रचना "चन्द्रताल" में प्रकाशनार्थ भेज कर हमारे इस अनुष्ठान को आगे बढ़ाने में अपना सहयोग दें। हिमाचल के सभी लेखक बन्धुओं से निवेदन है कि वह अपने इलाके की संस्कृति से सम्बन्धित लेख "चन्द्रताल" के लिए भेज कर हमें प्रोत्साहित व अनुगृहीत करें। लेख भेजते समय कृपया इस बात का विशेष ध्यान रखें कि लिखाई साफ-साफ हो जिसे आसानी से पढ़ा जा सके, लिखते समय पंक्तियों के बीच डबल दूरी दें अर्थात् एक पंक्ति छोड़ कर लिखें तथा पन्ने के एक ही ओर लिखें क्योंकि दोनों ओर लिखे पन्ने मुद्रण प्रक्रिया में विघ्न पैदा करते हैं। "चन्द्रताल" के पृष्ठ हर प्रकार के लेखकों व पाठकों के लिए खुले हैं। हमारा आग्रह है कि आप लोग ज़रा भी न हिचकें। पाठकगण हमें अपनी प्रतिक्रिया से अवश्य अवगत कराते रहें।

धन्यवाद!

संपादक

बकरी और उसके बच्चों की कथा

सतीश 'लोप्पा'

तेई - ई ई ई - तेई,
हां - हाँ हाँ हाँ - जी,

रहते-रहते-रहते, एक बकरी और उसके दो बच्चे रहा करते थे। वे अपने छोटे से घर में बड़े प्यार से खुशी-खुशी रहते थे। बकरी प्रतिदिन सुबह घास चरने जंगल में चली जाती, अपने बच्चों के लिए घास, पानी और स्तन भर के दूध ले आती। उसके दोनों बच्चे *'रहिचुड़'* (नर शावक) और *'पठि'* (मादा शावक) घर का दरवाज़ा भीतर से अच्छी तरह बन्द करके खेलते कूदते रहते और जब थक जाते तो एक दूसरे की गर्दन पर गर्दन रखकर ऊंघते रहते। उनकी मां शाम को आकर उनको पुकारती

"पट्टि अचा मे फरू ...,
रहिचुड़ अचा पेत्तङ अलू ...,
आ: बिङे शृङ हन्दग् ...,
चुच्चु बिङे पानु हन्दग् ...,
पुश्र बिङे ती हन्दग् ... !"

"शाविके, उठकर आग सुलगाओ,
शावक उठकर द्वार खुलाओ,
मुंह भर कर दूब लाई हूं,
स्तन भर कर दूध लाई हूं
घुटनों भर भर जल लाई हूं!"

मां की पुकार सुनते ही दोनों बच्चे प्रसन्न होकर उठते और उछलते, कूदते, कुलांचें भरते अपने-अपने काम में लग जाते। पठि उठकर चूल्हे में आग सुलगाती और रहिचुड़ उठकर दरवाज़ा खोलता। बकरी अन्दर आती, दोनों बच्चों को प्यार से पुचकारती, दुलारती, चाटती। उन्हें घास खिलाती, पानी पिलाती और जी भर दूध पिलाती। इस प्रकार आनन-फानन में उनके दिन बीत रहे थे।

फिर एक दिन एक दुष्ट रागस की नज़र बकरी के बच्चों पर पड़ी। उन का नर्म-नर्म मांस खाने के लिए उस का जी ललचाने लगा। एक दिन जब बकरी जंगल घास चरने चली गई तो मौके का लाभ उठाकर रागस बकरी के घर के द्वार पर आ गया और पुकारने लगा -

"बड्डि अज़ा मे फरू ...,
रहिज़ुड़ु अज़ा बेद्दङ अलू ...,
हा: बिङे शृङ हन्दग् ...,
जुज्जु बिङे बानु हन्दग् ...,
बुश्र बिङे दी हन्दग् ... !"

दोनों बच्चे चौक कर उठे, मां आज इतनी जल्दी क्यों लौट आई! अभी-अभी तो गई थी। तभी रागस ने अपनी मोटी भर्रायी आवाज़ में फिर पुकारा -

"बड्डि अज़ा मे फरू ...,
रहिज़ुड़ु अज़ा बेद्दङ अलू ...,
हा: बिङे शृङ हन्दग् ...,
जुज्जु बिङे बानु हन्दग् ...,
बुश्र बिङे दी हन्दग् ... !"

बच्चे अपनी मां की मीठी-मीठी प्यार भरी आवाज़ को अच्छी तरह पहचानते थे। उन्होंने एक दूसरे से कहा कि यह हमारी मां की आवाज़ नहीं हो सकती। ज़रूर कोई और होगा और उन्होंने दरवाज़ा बिल्कुल नहीं खोला। दोनों बिना आवाज़ किए चुपचाप दुबक कर बैठ गए। जब रागस ने देखा कि उसका छल कामयाब नहीं हो रहा तो वह चुपचाप चला गया।

शाम को बकरी घर पहुंची और अपनी मीठी-मीठी आवाज़ में पुकारा -

"पट्टि अचा मे फरू ...,
रहिचुड़ अचा पेत्तङ अलू ...,
आ: बिङे शृङ हन्दग् ...,
चुच्चु बिङे पानु हन्दग् ...,
पुश्र बिङे ती हन्दग् ... !"

बच्चों ने मां की आवाज़ पहचान ली और तुरन्त दरवाज़ा खोल दिया। मां से लाड़ दुलार करने लगे और दोनों दो ओर से स्तन पान करने लगे। मुंह उचका-उचका कर, दुम हिला-हिलाकर दूध का मज़ा लेते तो कभी दूब चखते, पानी पीते। खा-पीकर जब दोनों तृप्त हुए तो उन्होंने दिन की घटना मां को सुनाई। बकरी को समझते देर नहीं लगी कि कौन आया होगा! दोनों बच्चों को छाती से लगाकर कहने लगी, बहुत अच्छा किया तुमने जो दरवाज़ा नहीं खोला। बकरी ने बच्चों को सचेत करते हुए कहा कि इसके बाद फिर कभी वह पुकारे तो कभी दरवाज़ा मत खोलना। वह बहुत दुष्ट रागस है।

रागस मौके की ताक में रहने लगा। एक दिन बकरी जब जंगल को जाने लगी तो उसकी लार डेहरी पर टपक गई। रागस छिपकर सब देख रहा था। बकरी के चले जाने पर रागस डेहरी पर आया और लार को चाट लिया। बस उसकी आवाज़ बिल्कुल बकरी की जैसी हो गई। उसने पुकारा -

"पट्टि अचा मे फरू ....
रहिचुड़ अचा पेत्तङ अलू ....
आ: बिङे शृङ हन्दग् ....
चुच्चु बिङे पानु हन्दग् ....
पुश्र बिङे ती हन्दग् .... !"

बच्चों ने अपनी मां की ही आवाज़ है, समझ कर दरवाज़ा खोल दिया। सामने भयानक रागस को देखकर दोनों भय से पेऽ-पेऽ-पेऽ करने लगे रागस बेरहमी के साथ उन्हें उठा ले गया। शाम को बकरी जब घर पहुंची तो दरवाज़ा खुला हुआ था, उसका दिल धक् से रह गया। दोनों बच्चे अन्दर नहीं थे। बकरी समझ गई कि उसके बच्चों को कौन उठा ले गया। वह ज़ोर-ज़ोर से रोने बिलखने लगी। फिर थक हार कर रोते-रोते बच्चों की खोज में निकल पड़ी। उसने मन ही मन ठान ली कि वह रागस सिर्फ मिलना चाहिए। अपने नुकीले सींग से बस एक ही *'ग्रुफ्क:'* (बींधने और उस क्रिया से उत्पन्न ध्वनि का मिला जुला भाव) के साथ मार डालेगी।

जाते-जाते-जाते, रास्ते में कही उसे एक *'थपग्'* यानि सूआ मिला। बकरी को इस तरह बेहाल जाते देख वह बोला, *"लाऽचे-लाऽचे आँर ग्वातन्?"* (बकरी दीदी-बकरी दीदी, कहां जा रही हो?) बकरी ने सिसकते हुए बताया कि रागस मेरे दोनों बच्चों को ले गया है वह उन्हें खा जाएगा, मैं उन्हीं को खोजने निकली हूं। यह सुनकर सूआ ने कहा - बकरी दीदी, मैं भी तुम्हारे साथ चलूं? बकरी बोली, *"शबस-हे, इच्च: बे जुट चि माजि:!"* (उपकार हो, एक से दो जने क्या बुरा!) वे दोनों आगे बढ़े। कुछ दूर चलने पर उन्हें एक *'कैलिङ्ड्:'* यानि गोल मटोल दरिया का पत्थर मिला। बकरी और सूआ को जाते देख उसने पूछा - *"लाऽचे लाऽचे आँर ग्वातशि?"* (बकरी दीदी-बकरी दीदी, तुम दोनों कहां जा रही हो?) बकरी ने सिसकते हुए बताया कि रागस मेरे बच्चों को उठा ले गया है और हम दो उन्हें ढूंढने जा रही हैं। यह सुनकर गोल मटोल पत्थर बोला, बकरी दीदी, मैं भी तुम्हारे साथ चलूं? बकरी बोली, *"शबस-हे, जुट बे शुमि चि माजि:!"* (उपकार हो, दो से तीन जने क्या बुरा!) कुछ आगे चलकर उन्हें एक *'ल्हलाङु थोपिड़ि:'* यानि गोबर का थोपड़ा मिला। उसने भी बकरी से पूछा, *"लाऽचे-लाऽचे, आँर ग्वातई?* (बकरी दीदी-बकरी दीदी, कहां जा रही हो?) बकरी ने पूरी बात उसे बता दी। गोबर के थोपड़े ने भी कहा- बकरी दीदी मैं भी तुम्हारे साथ चलूं? बकरी ने कहा, *"शबस-हे, शुमि बे पिमि चि माजि:!"* (उपकार हो, तीन से चार जने क्या बुरा!) वे चारों आगे बढ़े। कुछ दूर चलने पर उन्हें एक *'छ्ऊ डेल:'* यानि नमक का ढेला मिला। बकरी और दूसरे लोगों को जाते देख उसने पूछा - *"लाऽचे-लाऽचे, आँर ग्वातई?"* (बकरी दीदी-बकरी दीदी, कहां जा रही हो?) बकरी ने सिसकते हुए उसे भी सब हाल कह सुनाया। यह सुनकर नमक का ढेला भी बोला, बकरी दीदी, मैं भी तुम्हारे साथ चलूं? बकरी बोली, *"शबस-हे, पिमि बे डमि चि माजि:!"* (उपकार हो, चार से पांच जने क्या बुरा!) तब वे पांचों लोग रागस को ढूंढते-ढूंढते बहुत दूर निकल गए और आखिरकार रागस के गुहाघर में पहुंचने में सफल हो गए। उस वक्त रागस शिकार के लिए वन में गया हुआ था। पांचों ने झटपट रागस को मारने की योजना बना ली। गोबर के थोपड़े ने कहा मैं डेहरी पर रहूंगा। गोल मटोल पत्थर ने कहा मैं द्वार के ऊपर रहूंगा। सूआ ने कहा मैं बिस्तर में छिप जाऊंगा। नमक के ढेले ने कहा मैं चूल्हे के अन्दर रहूंगा। बकरी स्वयं दरवाज़े के पीछे छिप गई। इस तरह सब ने अपना-अपना स्थान ले लिया और रागस के आने की प्रतीक्षा करने लगे। कुछ समय बाद रागस लौट आया। दरवाज़े के पास पहुंचा ही था कि डेहरी पर बैठे गोबर के थोपड़े के ऊपर उसका पांव पड़ गया और वह फिसल कर धड़ाम से ज़मीन पर जा गिरा और चित्त हो गया। उसी समय द्वार के ऊपर से गोल मटोल पत्थर रागस के सिर पर ज़ोर से आ गिरा। रागस दर्द से चीत्कार कर उठा। किसी तरह गिरता पड़ता दरवाज़ा खोलकर अन्दर जाने लगा तभी बकरी ने अपने सींगों से कमर पर ज़बरदस्त प्रहार कर दिया। रागस मुंह के बल चूल्हे के पास जा गिरा, उस की कमर ही टूट गई। वह ज़ोर-ज़ोर से कराहने लगा -"हाय, मार डाला रे! --- हाय, मार डाला रे!" किसी तरह उसने अपने आप को सम्भाला और सोचा कि आग जलाऊं और कमर को सेक लगाऊं। वह चूल्हे में आग जलाने की कोशिश में फू-फू करने लगा। आग सुलगते ही नमक का ढेला ज़ोरदार कड़कड़ाहट के साथ फट पड़ा। रागस का सारा मुंह जल गया और उस की दोनों आंखें फूट गईं। दर्द से कराहने और बुदबुदाने लगा - "आज तो मार ही डाला रे!" रागस का जान पक्का! अब भी घिसटता हुआ एक कोने पर

(शेष पृष्ठ 9 कालम 3 पर)

मीडिया का आतंक और संस्कृति का ह्रास

आधुनिक संचार-साधनों ने यूं तो संसार को एक-दूसरे के निकट कर दिया है। भावनाओं के अदान-प्रदान द्वारा परस्पर दूरियां मिटाई। मनोरंजन के नए-नए तरीके ईजाद किए और उन्हें लोगों तक पहुंचाया। इस तरह से एक तरफ मीडिया के सकारात्मक पक्ष है वहीं दूसरी तरफ हमें इस के नकारात्मक प्रभावों को भी अनदेखा नहीं करना चाहिए।

इधर पिछले कुछ सालों से, जब से स्पीति में दूरसंचार की व्यवस्था हुई है। एक सार्थक, इन्द्रलोक व परलोक में काम आने वाली संस्कृति को छोड़कर थोड़ी सी लोकप्रिय व सतही संस्कृति की तरफ मुड़ रहे हैं। यह ऐसी ही बात है कि कोई काम धेनु को छोड़कर बकरी को दूध दूहने जाए। आज स्पीति में पचास प्रतिशत लोगों के पास टी०वी० में जो कुछ प्रसारित होता है, गलत है लेकिन इन कार्यक्रमों से लोगों के चित्त में जों परिवर्तन आता है उसे हम एक अच्छी मानसिकता नहीं कह सकते। फिर विज्ञापन जगत है जो आर्कषक साधनों द्वारा दिलों में एक नकली मांग पैदा करता है। अगर हम सावधान न रहे तो टी०वी० संस्कृति कुछ सालों में हमारी प्राचीन संस्कृति पर हावी हो जाएगी। विशेष कर युवावर्ग इससे ज्यादा प्रभावित है। उन्होंने अभी से अपने पारम्परिक ज्ञान एवं स्वस्थ परम्पराओं को उपेक्षा से देखना शुरु कर दिया है।

इसलिए घाटी के नेताओं, बुद्धिजीवियों, समाज-सुधारकों और धार्मिक-सांस्कृतिक गतिविधियों से जुड़े लोगों को चाहिए कि स्पीति की बौद्ध-संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए तुरन्त परिणामकारी कदम उठाए। यह भी सौभाग्य की बात है कि फ़िलहाल समस्त स्थिति के लोग बौद्ध-धर्म के अनुयायी है।

- छिमेद दोरजे
स्पीति

गज़ल

हर मुस्कुराते चेहरे के पीछे
इक दर्दे-गम मिलेगा
ज़रा सा दिल को टटोलो
आंसुओं का सैलाब मिलेगा

हम तो तुम्हें भुला देंगे मगर
कहने वाले तो न रुकेंगे
बेवफ़ाओं के नाम
जो लिखेगा ज़माना
तुम्हारा नाम सरे फ़हरिस्त मिलेगा

उनकी यादें, मेरी उदास शामें
पल-पल बीतती ज़िन्दगी
संग-संग गुज़ारे वो पल
आज एक-आध नहीं,
जाम का दौर चलेगा

दिल में कुछ, ज़ुबां पे कुछ
ख़यालों में कुछ, ख़्वाबों में कुछ
एक ही शख़्स के न जाने
कितने रूप मिलेंगे!

-छिमेद दोरजे

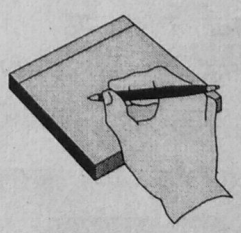

पृष्ठ 8 का शेष : बकरी.....

पड़े बिस्तर की ओर जाने लगा। सोचा कि अब बिस्तर पर पड़ा रहूंगा, शायद आराम मिले। अभी बिस्तर पर लेटा ही था कि सूआ बड़ी तेज़ी के साथ उसके दिल के आर-पार हो गया। रागस ज़ोर से चीखा और मर गया।

अब बकरी और उस के साथियों ने उसे बाहर घसीट निकाला। रागस को तो मार दिया, अब बच्चों को कहां खोजें! उन्होंने रागस का पेट फाड़ डाला, मगर पेट में बच्चे नहीं थे। वे सब मायूस हो गए, बकरी सिसकने लगी। और कहां ढूंढें! तभी एक कौवा उड़ता हुआ आया और कहने लगा - यदि इस रागस का सारा मांस मुझे दे दो तो मै तुम्हें 'अक्ल' बताऊं! बकरी उतावली होकर बोली, हां हां जल्दी बताओ, सारा मांस तुम्हीं को है। कौवे ने कहा, ज़रा रागस का मुंह खोलो और उसकी जीभ के नीचे देखो। मुंह खोल कर जीभ के नीचे देखा तो सचमुच रागस ने दोनों बच्चों को जीभ के नीचे दबा रखा था, और चूस-चूस कर बहुत छोटा और कमज़ोर कर दिया था। पर वे दोनों अभी भी जीवित थे। बच्चों की हालत देख कर बकरी की आंखें डबडबा आईं। बकरी ने अपने दोनों बच्चों को रागस के मुंह से निकाला और सीने से लगा कर उन्हें घर ले आई। बड़े प्यार दुलार से उनकी तीमारदारी में लग गई। शीघ्र ही दोनों बच्चे स्वस्थ हो गए। अब बकरी उन्हें अकेला छोड़ कर कभी नहीं जाती। वह उन्हें भी अपने साथ वन में चराने ले जाती। अब वे तीनों पहले की तरह ही खुशी-खुशी रहने लगे।

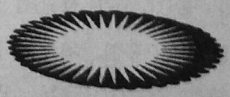

मीडिया का आतंक और संस्कृति का ह्रास

आधुनिक संचार-साधनों ने यूं तो संसार को एक-दूसरे के निकट कर दिया है। भावनाओं के अदान-प्रदान द्वारा परस्पर दूरियां मिटाई। मनोरंजन के नए-नए तरीके ईजाद किए और उन्हें लोगों तक पहुंचाया। इस तरह से एक तरफ मीडिया के सकारात्मक पक्ष है वहीं दूसरी तरफ हमें इस के नकारात्मक प्रभावों को भी अनदेखा नहीं करना चाहिए।

इधर पिछले कुछ सालों से, जब से स्पीति में दूरसंचार की व्यवस्था हुई है। एक सार्थक, इन्द्रलोक व परलोक में काम आने वाली संस्कृति को छोड़कर थोड़ी सी लोकप्रिय व सतही संस्कृति की तरफ मुड़ रहे है। यह ऐसी ही बात है कि कोई काम धेनु को छोड़कर बकरी को दूध दूहने जाए। आज स्पीति में पचास प्रतिशत लोगों के पास टी०वी० में जो कुछ प्रसारित होता है, गलत है लेकिन इन कार्यक्रमों से लोगों के चित्त में जों परिवर्तन आता है उसे हम एक अच्छी मानसिकता नहीं कह सकते। फिर विज्ञापन जगत है जो आर्कषक साधनों द्वारा दिलों में एक नकली मांग पैदा करता है। अगर हम सावधान न रहे तो टी०वी० संस्कृति कुछ सालों में हमारी प्राचीन संस्कृति पर हावी हो जाएगी। विशेष कर युवावर्ग इससे ज्यादा प्रभावित है। उन्होंने अभी से अपने पारम्परिक ज्ञान एवं स्वस्थ परम्पराओं को उपेक्षा से देखना शुरु कर दिया है।

इसलिए घाटी के नेताओं, बुद्धिजीवियों, समाज-सुधारकों और धार्मिक-सांस्कृतिक गतिविधियों से जुड़े लोगों को चाहिए कि स्पीति की बौद्ध-संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए तुरन्त परिणामकारी कदम उठाए। यह भी सौभाग्य की बात है कि फ़िलहाल समस्त स्थिति के लोग बौद्ध-धर्म के अनुयायी है।

- छिमेद दोरजे
स्पीति

गज़ल

हर मुस्कुराते चेहरे के पीछे
इक दर्दे-गम मिलेगा
ज़रा सा दिल को टटोलो
आंसुओं का सैलाब मिलेगा

हम तो तुम्हें भुला देंगे मगर
कहने वाले तो न रुकेंगे
बेवफ़ाओं के नाम
जो लिखेगा ज़माना
तुम्हारा नाम सरे फ़हरिस्त मिलेगा

उनकी यादें, मेरी उदास शामें
पल-पल बीतती ज़िन्दगी
संग-संग गुज़ारे वो पल
आज एक-आध नहीं,
जाम का दौर चलेगा

दिल में कुछ, ज़ुबां पे कुछ
ख़यालों में कुछ, ख़्वाबों में कुछ
एक ही शख़्स के न जाने
कितने रूप मिलेंगे!

-छिमेद दोरजे

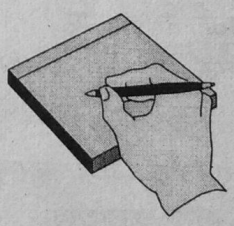

पृष्ठ 8 का शेष : बकरी.....

पड़े बिस्तर की ओर जाने लगा। सोचा कि अब बिस्तर पर पड़ा रहूंगा, शायद आराम मिले। अभी बिस्तर पर लेटा ही था कि सूआ बड़ी तेज़ी के साथ उसके दिल के आर-पार हो गया। रागस ज़ोर से चीखा और मर गया।

अब बकरी और उस के साथियों ने उसे बाहर घसीट निकाला। रागस को तो मार दिया, अब बच्चों को कहां खोजें! उन्होंने रागस का पेट फाड़ डाला, मगर पेट में बच्चे नहीं थे। वे सब मायूस हो गए, बकरी सिसकने लगी। और कहां ढूंढें! तभी एक कौवा उड़ता हुआ आया और कहने लगा - यदि इस रागस का सारा मांस मुझे दे दो तो मैं तुम्हें 'अक्ल' बताऊं! बकरी उतावली होकर बोली, हां हां जल्दी बताओ, सारा मांस तुम्हीं को है। कौवे ने कहा, ज़रा रागस का मुंह खोलो और उसकी जीभ के नीचे देखो। मुंह खोल कर जीभ के नीचे देखा तो सचमुच रागस ने दोनों बच्चों को जीभ के नीचे दबा रखा था, और चूस-चूस कर बहुत छोटा और कमज़ोर कर दिया था। पर वे दोनों अभी भी जीवित थे। बच्चों की हालत देख कर बकरी की आंखें डबडबा आईं। बकरी ने अपने दोनों बच्चों को रागस के मुंह से निकाला और सीने से लगा कर उन्हें घर ले आई। बड़े प्यार दुलार से उनकी तीमारदारी में लग गई। शीघ्र ही दोनों बच्चे स्वस्थ हो गए। अब बकरी उन्हें अकेला छोड़ कर कभी नहीं जाती। वह उन्हें भी अपने साथ वन में चराने ले जाती। अब वे तीनों पहले की तरह ही खुशी-खुशी रहने लगे।

पांच पाण्डु पुत्रों का गुरे-गीत

- अनुवादक के० अंगरूप 'लाहुली'

लाहुल के पटनवादी समाज में गुरे-गीतों यानि लोकगीतों और गाथाओं के गाने का बड़ा प्रचलन है। सांस्कृतिक एवं मांगलिक अवसरों पर तो इन्हें गाया ही जाता है, यहां तक कि सामान्य गोष्ठियों में भी लोग गुरे-गीतों को बड़े चाव के साथ गाते हैं। गुरे शब्द भोट भाषा के मगुर-मा का अपभ्रंश रूप है, जिसका वाच्यार्थ प्रशंसा-गीत यानि गुरे गीत है। निम्न गुरे-गीत पाण्डु पुत्रों की चर्या यानि स्तुति गीत है। गुरे में महारानी कुन्ती को पाण्डु पुत्रों की जननी बताई गई है। वस्तुतः कुन्ती के, कर्ण को छोड़कर, पाण्डु पुत्रों के नाम से युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन नाम के तीन ही पुत्र थे। नकुल और सहदेव महाराजा पाण्डु की दूसरी भार्या रानी माद्री की सन्तानें थीं।

कथा इस प्रकार है। कुन्ती यदुवंश के राजा शूर की कन्या थी और श्री कृष्ण के पिता वसुदेव की सगी बहन थी। इस प्रकार कुन्ती कृष्ण की बुआ लगती थी। सूर्यदेव की कृपा से कुन्ती की कोख से विवाह पूर्व कर्ण का जन्म हुआ था। पश्चात कुन्ती का विवाह हस्तिनापुर के नरेश महाराजा पाण्डु से हुआ था, चूंकि नरेश किसी शाप के कारण संतान उत्पन्न करने में असमर्थ थे अतः कुन्ती ने पतिदेव से अनुमति लेकर धर्मराज, वायु एवं इन्द्र का आह्वान कर क्रमशः युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन आदि तीन पुत्र प्राप्त किए। कुन्ती ने बचपन में ही अपनी तपस्या से दुर्वासा ऋषि को प्रसन्न कर उनसे वर प्राप्त किया था। उसके बल पर वह किसी भी देवता का आह्वान कर उसे बुला सकती थी और मन चाहा पुत्र प्राप्त कर सकती थी। महारानी कुन्ती की ही सम्मति से पाण्डु नरेश की दूसरी पत्नी माद्री ने भी अश्विनी कुमारों का आह्वान किया और नकुल तथा सहदेव दो पुत्रों की प्राप्ति की। देवताओं के वरदान से प्राप्त ये पुत्र कालान्तर में पञ्च पाण्डवों के नाम से ख्यात हुए, क्योंकि इनका जन्म पाण्डु नरेश की रानियों की कोख से हुआ है, अतः वे पांच पाण्डव कहलाए।

गुरे-गीत और उसका भावानुवाद निम्न प्रकार से है-

ए माता न क्वैताए,
तऊं पंजा पूतुरु जामीए।
तऊं पंज पूतुरू जामीए ॥

ए पंजा न पुतुराए,
तऊं पांजा पण्डुपाए।
तऊं पांजा पण्डुपाए ॥

ए जेठूणा न पुतुराए,
तऊं राजा जेठाड़ाए।
तऊं राजा जेठाड़ाए ॥

ए तेठी न कनेठाए,
तऊं सादेवा पण्डिताए।
तऊं सादेवा पण्डिताए ॥

ए सादेवा न पण्डिताए,
तऊं पातीरी हेरीए।
तऊं पातीरी हेरीए ॥

ए तेठी न कनेठाए,
तऊं आरू राजा बीराए।
तऊं आरू राजा बीराए ॥

ए आरू राजा बीराए,
तऊं तीरा चालांदाए।
तऊं तीरा चालांदाए ॥

ए तेठी न कनेठाए,
तऊं नाकूला बीराए।
तऊं नाकूला बीराए ॥

ए नाकूलाना बीराए,
तऊं नक्का ढोलणु छेड़ीए।
तऊं नक्का ढोलणु छेड़ीए ॥

ए तेठी न कनेठाए,
तऊं भीमाना बीराए।
तऊं भीमाना बीराए ॥

ए भीमाना बीराए,
तऊं भीमा बाता छेड़ीए।
तऊं भीमा बाता छेड़ीए ॥

अनुवाद -

माता कुन्ती ने उन पांच पुत्रों को जन्म दिया, जो कालान्तर में पंच-पाण्डव (के नाम से प्रसिद्ध हुए)। उन पांच पाण्डवों में से ज्येष्ठ पुत्र (युधिष्ठिर) एक बड़े (धार्मिक) राजा हुए। उन से कनिष्ठ सहदेव (पाण्डवों में) एक पण्डित यानि विद्वान व्यक्ति निकला, जो (सदा) पंचांग अवलोकन किया करता था। उन से छोटा वीर अर्जुन (एक बड़ा योद्धा था)। वह तीर-कमान चलाया करता था, और वह उसी में दक्ष था। उन से छोटा भाई नकुल वीर कहलाता था। वह नक्कारा (नगाड़ा) और ढोल आदि बजाने में सिद्धहस्त था। उन चारों भाईयों में सबसे कनिष्ठ भीम वीर पुरुष था, जो (अपने अग्रजों से) वीर रस की बातें ही किया करता था।

नोट :- गुरे गीत में पाण्डवों के अवस्था-क्रम का ख्याल नहीं रखा गया।

कोऑपरेटिव आन्दोलन - जन आन्दोलन

- शिव चन्द ठाकुर

खुदा ने आज तक उस कौम की हालत नहीं बदली।
न हो ख्याल जिस कौम को आप अपनी हालत बदलने का।

कॉपरेटिव एक अंग्रेज़ी शब्द है जिसका अर्थ है एक दूसरे के साथ मिलजुलकर काम, करना। सहकारी संस्था का जन्म गुरबत की कोख से हुआ है। वैसे तो सहकारिता की भावना वैदिक काल से था, परन्तु संवैधानिक रुप में तब इसका अस्तित्व नहीं था। शादी, गमी में इकट्ठे होकर एक दूसरे का सेहयोग करना मनुष्य ने आरम्भ से ही सीखा। सहकारिता आन्दोलन भारत में 20वीं शताब्दी के आरम्भ में अंग्रेज़ी सरकार ने काफी सोच विचार के बाद गरीब किसानों और दूसरे वर्ग के लिए साहुकारों, महाजनों के हथकडों से बचाने और ग्रामीण ऋणग्रस्तता की बीमारी की रोकथाम के लिए कानूनी शक्ल दिया। साथ ही कमज़ोर वर्ग जो इन्तहां गरीबी, अकाल, भूचाल आदि प्राकृतिक आपदाओं के प्रकोप से बचाने के लिए सहकारी संस्था ने जन्म लिया। भारत में सहकारिता आन्दोलन सांसार भर के सहकारी संस्था के आन्दोलन का हिस्सा रहा है; जिसने भाईचारे की भावना, बिना साम्प्रदायिकता व रंग भेद के काम किया। सहकारिता के सतरंगी झंडे ने दुनिया भर के लोगों में एक नई उमंग और जोश का काम किया है।

पुराने हिमाचल में सहकारिता आन्दोलन का आगाज़ आज़ादी के बाद अमल में आया। आरम्भ में इस आन्दोलन के कमज़ोर पड़ने का कारण था... फैली हुई आबादी, यातायात की कमी, पुराने तौर-तरीके पर कृषि कार्य का होना। हिमाचल में प्रथम सहकारी सस्था 1892 में जिला ऊना के पंजावर गांव में स्थापित हुआ था। इस सहकारी संस्था से प्रेरित होकर सहकारी आन्दोलन को संवैधानिक रूप देने के लिए 1904 में प्रथम सहकारी एक्ट बना तथा 1917 को संविधान का संशोधन किया गया।

स्वतन्त्रता के पश्चात् पंच वर्षीय योजना द्वारा इस का महत्व बढ़ता गया। किसान को ऋण सुविधा देने के लिए एक आन्दोलन के रूप में शुरु होकर इन पचास वर्षो में सहकारिता आन्दोलन हमारे आर्थिक जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में फैल गया। सहकारिता राष्ट्र आर्थिक योजना का अंग बन गई है। अब यह स्वीकार कर लिया गया है कि सहकारी आन्दोलन धीरे-धीरे देश के आर्थिक क्षेत्र का प्रमुख आधार बन गया है। सहकारिता आर्थिक जीवन स्तर उन्नत करने के लिए जनता के संगठित प्रयासों का प्रतीक है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में महाजनों ने किसानों की ऋण राशि सूद के साथ कई गुणा बढ़ा दिए। साहुकार इतने से भी सन्तुष्ट नहीं हुए, वरन् उनकी भूमि भी कुर्क कर ली।

उस समय ब्रिटिश शासन ने इस धांधली को समाप्त करने का निश्चय किया। सर एफ० निकलसन, आई० सी० एस०, को मद्रास राज्य ने विशेष रूप से ग्रामीण ऋण की समस्या को सुलझाने के लिए नियुक्त किया, उन्होंने अपनी रिपोर्ट में कृषि भूमि विकास बैंक के प्रणाली को प्रचलित करने की सिफारिश की; इसी समय मि० डुपेक्स, आई०सी०एस० को उ०प्र० सरकार ने इसी कार्य के लिए नियुक्त किया।उन्होने ग्रामीण बैंक को शुरु करने का अनुमोदन किया। उपर्युक्त दोनों अधिकारियों के प्रयास से भारत सरकार ने एक कमेटी का गठन किया जिसके रिपोर्ट के आधार पर भारत में कोऑपरेटिव क्रेडिट सोसायटी स्थापित कर दिया गया। इस प्रकार प्रथम बार भारत में सहकारी संस्था को संवैधानिक दर्जा मिला।

सहकारिता एक जन आन्दोलन है गांव के हर सदस्य नैतिक तौर पर परस्पर सहयोग व अन्य योगदान करने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत वर्ष में 1989 तक सहकारी योजना में 45,000 करोड़ का निवेश सरकार द्वारा किया गया। खाद आदि के उत्पादन 80 प्रतिशत सहकारी सस्थाओं द्वारा नियोजित की जाती है। इसी प्रकार 67,000 सहकारी सस्ते सामान की दुकानो ने 90 लाख टन खाद का आबंटन किया। भारत में खाद बनाने वाले बड़े-बड़े कारखाने जैसे इण्डियन फर्टीलाइज़र तथा कृभको भी सहकारी सैक्टर में है।

हिमाचल प्रदेश का सहकारी संगठन जो कि एपेक्स संस्था है, जहां सहकारी संस्था को बढ़ावा देने के लिए मुख्य भूमिका निभा रही है। साथ ही लोगों में शिक्षण,प्रशिक्षण प्रचारात्मक क्रियाकलापों के प्रति जागरुकता पैदा कर रही है। हिमाचल में लगभग तीन हज़ार चार सौ से अधिक सहकारी संस्थाएं है,जिनमें से एल०पी०एस० भी एक है। इसकी कहानी निराली है। 1962 के भारत पर चीनी हमला ने कुट के व्यपारियों को बड़ा धक्का दिया। ऊन, पशम, चीगू, व्याङ जो तिब्बत से आता था, आना बन्द हो गया। गोया इस तरह लाहुल की आर्थिक स्थिति को पंगु बना दिया। ऐसे हालात नें लोगों को विवश किया कि वे आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने के लिए साधन ढूंढे। ऐसे समय में लोगों को आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए आलू एक नेमत के रुप में मिला। 1966 में एल० पी०एस० को सहकारी संस्था के रुप में पंजीकृत किया गया। यह संस्था आज भारत के आलातरीन संस्थाओं में गिना जाता है। इसी तरह भुट्टी वीवर्ज़ ने भी देश-विदेश में अपने उत्पादन द्वारा अपना नाम रोशन किया है। हिमाचल में कोटगढ़ मल्टीपरपज़ सोसाईटी, केन्द्रीय कांगड़ा सहकारी बैंक आदि भी इस क्षेत्र में सराहनीय कार्य कर रही है।

संतुलित विकास का आधार - सहकारिता

- मनमोहन गौतम

अकेला जीव कुछ नहीं कर सकता, ज़िन्दा रहने के लिए दूसरों पर निर्भर होना ही पड़ेगा, यही है प्रकृति का नियम। जीवन निर्वाह के लिए वायु, जल, भोजन, वस्त्र, आवास, पढ़ाई, दवाई इत्यादि के साथ-साथ भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए पराश्रित रहना ही होगा, चाहे वह प्रकृति पर है या जीव पर। इन सबके सामञ्जस्य को ही सहकारिता कहते हैं। आज भले ही सहकारिता को शब्दबद्ध करके विस्तृत लेख तथा पुस्तकें लिखी जा रही हों, चाहे भाषणों से मन्त्रमुग्ध किया जा रहा हो परन्तु जब तक भावनाओं का सामञ्जस्य न बिठाया जाए, तब तक सहकारिता की परिभाषा ही अधूरी है। जहां अधूरापन होता है वहां विकृतियां उभ्रंती हैं और इससे सन्तुलनात्मक विकास अवरुद्ध होता है।

सहकारिता तो सन्तुलन का संदेश देती है। चाहे वह धार्मिक हो, सामाजिक, राजनैतिक अथवा आर्थिक हो, सहकारिता सब में ओत-प्रोत है। परन्तु कोई भी क्षेत्र तभी विकसित हो पाता है जब वहां सहकारिता को आधार मान कर सामञ्जस्य स्थापित किया जाता है। आर्थिक क्षेत्र में सहकारिता का क्या रूप-स्वरूप हो, यह देश काल एवं पात्र पर निर्भर करता है। इसलिए देश के प्रथम प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने देश के आर्थिक विकास के लिए सहकारी क्षेत्र की संकल्पना की थी। उनका दृष्टिकोण था कि देश में एक ऐसा क्षेत्र होना चाहिए जो कि निजीकरण के शोषण की प्रवृत्ति से मुक्त हो और नौकरशाही के शिकंजे से दूर एक ऐसा क्षेत्र हो जिसमें केवल जनता की ही नीति के क्रियान्वयन में भागीदारी हो, इसीलिए उन्होंने सहकारी क्षेत्र की अवधारणा की थी जो राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त रहे और आम जनता के चुने व्यक्तियों से नियन्त्रित हो।

जहां तक हिमाचल प्रदेश का सम्बन्ध है, यह प्रदेश सांस्कृतिक धरोहर तथा भौतिक संसाधन का धनी है। यहां का हर कार्य सहकारिता के अनुसार ही होता आ रहा है, यहां के कृषि एवं निर्माण कार्य, तीज त्यौहारों को मनाने का आधार सहकारिता ही है। परन्तु आज के बदलते परिवेश में सहकारिता की कार्य प्रणाली को और अधिक व्यावहारिक बनाने की ज़रूरत है। सहकारिता एक भावना है यानि कि जनसाधारण की निजी पूंजी जिसे किसी कानून एवं परिधि से बांधा नहीं जा सकता है। अत: इस भावना के लिए उचित वातावरण तैयार करने का दायित्व समाज के कर्णधारों के कंधों पर है जो चरित्रवान हो तथा जिनका नैतिक स्तर काफी ऊंचा हो, निजी स्वार्थ को छोड़ कर जिनमें पूरे समाज के उत्थान की भावना निहित हो। क्योंकि सहकारिता का मूल मन्त्र ही 'एक सबके लिए, व सब एक के लिए' है। प्रदेश के संसाधनों का सहकारिता के माध्यम से उचित दोहन करने हेतु समयानुकूल नीतिनिर्धारण की आवश्यकता है ताकि संसाधनों का अधिकतम उपयोग एवं शोषण रहित वितरण हो सके। प्रदेश में जल, खनिज, वन-वनस्पति, कृषि एवं बागवानी इत्यादि मुख्यत: संसाधन हैं। इन संसाधनों के कच्चे माल का दोहन सरकार 'न लाभ न हानि' के आधार पर करें (यानि *कि इन्डस्ट्री* सरकार के नियन्त्रण में रहे) तथा कच्चे माल से उत्पादन सहकारिता क्षेत्र से ही प्रतिबन्धित किया जाए एवं उत्पादन का वितरण व्यक्तिगत हाथों को दिया जाना चाहिए। लाभ का अंश किसी व्यक्ति एवं क्षेत्र विशेष के पास न रह कर विकेन्द्रित हो जाने से संतुलित विकास किया जा सकता है। उदाहरण के लिए सीमेंट को लीजिए। सीमेंट का कच्चा माल सीमेंट का पत्थर है। इस पत्थर का दोहन सरकार 'न लाभ न हानि' के आधार पर करे। सीमेंट उत्पादन केवल सहकारी क्षेत्र से ही प्रतिबन्धित किया जाए तथा आगामी वितरण एवं उत्पादन जैसे हॉलो-ब्लॉक इत्यादि व्यक्तिगत एवं निजी क्षेत्र को दिया जाए। इस प्रकार न तो पत्थर का अंधाधुंध एवं अवैज्ञानिक ढंग से निकाला जाएगा और न ही पर्यावरण पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा। ऐसा करने से लाभ का अंश व्यक्ति एवं क्षेत्र विशेष के पास न रह कर विभिन्न क्षेत्रों को जाएगा। इसी तरह अन्य संसाधनों का भी सहकारिता के आधार पर दोहन करने से जहां कच्चे माल का अधिकतम उपयोग होगा वहीं रोज़गार के साधन बढ़ेंगे। यदि हम अपना ध्यान सहकारी सोच पर केंद्रित करके इसके मूल्यों एवं अवमूल्यों पर अनुसंधान करें तो वह दिन दूर नहीं होगा जब हाथ उठने से पहले ही रोज़गार के साधन सामने होंगे। इस प्रकार जहां नेहरू जी का सहकारी भारत का सपना साकार होने की ओर यह एक पग उठेगा वहीं प्रदेश आर्थिक मज़बूती के साथ स्वावलम्बन, खुशहाली एवं समृद्धि की ओर अग्रसर होगा।

सचिव, ज़िला सहकारी संघ सीमित, कुल्लू

ज़िला कुल्लू एवं लाहुल-स्पीति में सहकारिता के उतार-चढ़ाव

-मंगत राम

अवाम के लब पे आम चर्चा है
इस इन्सानी दोस्ती का।
चमन चमन में शुभागमन है
बहारे हमदादी बाह्मी का।

कुल्लू ज़िला में विधि विधान के अनुसार संगठित रूप से सहकारिता का सूत्रपात सन् 1915 में हुआ था। साहुकारों द्वारा जन साधारण विशेषकर कृषकों के शोषण की समस्या ने गम्भीर रूप धारण कर लिया था। इसलिए कृषकों की सहकारी समितियां गठित करके उनके द्वारा सदस्यों को कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराया गया। स्वतन्त्रता से पहले उन समितियों का यही मुख्य व्यवसाय रहा। स्वतन्त्रता के बाद इनका कार्यक्षेत्र विस्तृत बनाया गया। इसकी परिधि में रुपए के लेन-देन के अतिरिक्त व्यापार, उद्योग, कृषि संसाधन और अन्य उपभोक्ता पदार्थों की आपूर्ति और कृषकों के उत्पादों का विपणन आदि अनेक व्यवसाय आ गए। अब कृषि सेवा समितियों का ऋण कार्य लगभग समाप्त हो गया है, क्योंकि अब सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं के अधीन अनेक संस्थाओं द्वारा पर्याप्त ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है।

सहकारी सभाओं के पास अब मुख्य रुप से बुनकर उद्योग और वितरण प्रणाली रह गए हैं। इस समय कुल्लू और बन्जार तहसीलों में सस्ते अनाज के सरकारी डिपो 50 प्रतिशत से भी अधिक सहकारी समितियां के पास हैं। आनी और निरमण्ड तहसीलों में 100 प्रतिशत डिपुओं को सहकारी सभाएं चला रही है। लाहौल उपमण्डल में लाहौल आलू उत्पादक विपणन सहकारी सभा उपभोक्ता वस्तुओं के अतिरिक्त अन्य आवश्यकताओं की आपूर्ति भी घर-घर कर रही है। इस सभा की गतिविधियों का विवरण अन्त में दिया जाएगा। अभी कुल्लू की बुनकर समितियां की कहानी लिखना उचित रहेगा। कुल्लू की बुनकर समितियों की संख्या 90 है। इन में एक सुप्रसिद्व भुट्टी बुनकर सहकारी सभा भी है। इस सभा की सदस्य संख्या 500 के लगभग है। कुल्लू में बुनकर उद्योग विशेषकर शॉल उद्योग को विश्वविख्यात बनाने मे सबसे बड़ा हाथ है। आज कुल्लू में सभी नगरों और मुख्य-मुख्य गांवों में हज़ारों बुनकर शाल पट्टू, मफ़लर, कुल्वी टोपी तैयार कर रहें है। आज कुल्लू की सहकारी सभाएं 13 करोड़ रूपए मूल्य का तैयार माल प्रतिवर्ष बेचती है। बुनकर उद्योग सहकारी सभाओं की कृपा से कुल्लू में खूब पनपा है, इसी कारण हिमाचल शीर्षस्थ बुनकर सहकारी सभा का मुख्यालय भी कुल्लू में रखा गया। इस समय भुट्टी बुनकर सहकारी सभा सबसे अधिक माल तैयार करती है। विभिन्न स्थानों पर इसके 22 शोरूम हैं। इसके अतिरिक्त यह देश-विदेश में आयोजित मेलों और प्रदर्शनियों में भी भाग लेती है। आजकल कुल्लू में 12 सहकारी परिवहन सहकारी सभाएं भी कार्य कर रही है। महिलाओं की भी 26 सहकारी सभाएं हैं।

अब लाहुल आलू उत्पादक विपणन सहकारी सभा की गतिविधियों का कुछ विस्तृत वर्णन करते हैं। इस सभा का कार्यक्षेत्र पूरा लाहुल उपमण्डल है और मुख्यालय मनाली में है। कार्यक्षेत्र में लगभग दो हज़ार परिवार रहतें है। प्रत्येक परिवार सभा का सदस्य है। कुछ वर्ष पूर्व विशेषज्ञों ने सिद्ध किया कि जो आलू लाहुल में पैदा होता है, वह रोगमुक्त है और यह स्वस्थ और अधिक उपज देता है। अतः बीज के लिए इसकी मांग देश भर में बढ़ गई है। आरम्भ में आलू का विपणन कुछ लोग निजी तौर पर करने लगे। बाद में वहां के लोगों ने समझदारी से काम लेते हुए सहकारी सभा का गठन किया। लोग आलू सभा को पेशगी देते हैं और सभा आलू बेच कर अपना थोड़ा सा कमीशन काट शेष सारा पैसा उनको अदा कर देती है। बाद में सभा ने देखा कि इसके सदस्यों को आवश्यकता की वस्तुएं इधर-उधर से लानी पड़ती हैं, इसलिए सभा ने सभी प्रकार की उपभोक्ता वस्तुएं उनके घरों में ही उपलब्ध कराने का प्रबन्ध भी कर दिया। इससे लोगों को दोहरा लाभ मिलने लगा, एक ओर उपज का अधिक मूल्य मिलने लगा, तो दूसरी ओर उनकी घरेलू आवश्यकताओं की वस्तुएं उचित मूल्य पर मिलने लगी। साथ ही उन्हें आलू बिकने तक पैसों की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। पहले आलू के मूल्य की दर उत्पाद नहीं, अपितु व्यापारी निधार्रित करता था अब मूल्य उत्पादकों की यह सभा निधार्रित करती है यह बहुत बड़ी उपलब्धि है। यह सभा प्रतिवर्ष 4-6 करोड़ रुपये का आलू देश के कई राज्यों को बेचती है इसके मुख्य ग्राहक पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, बंगाल आदि राज्य हैं। इस व्यवस्था से क्रेता

और विक्रेता दोनों को लाभ हो रहा है। इसके अतिरिक्त विदेशों को भी आलू भेजा जाता है। पिछले वर्ष सभा ने पाकिस्तान को बीज आलू की सप्लाई की तथा इसके परिणाम ठीक होने के कारण अब भी आलू की मांग श्रीलंका, बर्मा, बंगला देश आदि देशों में भी है।

आलू पैदा करने के लिए खादों और कीट एवं रोगनाशक दवाईयों की भी आवश्यकता होती है। सभा उनको अब लाहुल घाटी में और उधर से होकर लद्दाख क्षेत्र के लिए भी पर्याप्त संख्या में पर्यटक भी आ रहे हैं। सभा ने उनकी आवश्यकताओं की वस्तुएं स्थान-स्थान पर उपलब्ध कराने का कार्य भी हाथ में ले लिया है।

कुल्लू और लाहुल-स्पिति की सहकारी सभाओं को सफल बनाने में सरकार का भी बड़ा योगदान रहा है। सरकार ने सहकारी सभाओं को अपनी विभिन्न योजनाओं के अधीन भागधन, कार्यशील पूंजी, प्रबन्ध व्यय, भवन निर्माण और फर्नीचर आदि के लिए बड़े पैमाने पर आर्थिक सहायता दी। इस सहायता के कारण सहकारी सभाएं दृढ़ता से कार्य करने में सक्षम हो गई है।

पर्यटन सहकारी सभाएं

हिमाचल प्रदेश सरकार ने भारत वर्ष के अन्य 22 राज्यों के साथ-साथ पर्यटन को औद्योगिक घोषित किया है। इस उद्योग को सहकारी क्षेत्र के अन्तर्गत विकसित करने के साथ-साथ बेरोजगार प्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित युवाओं को रोजगार उपलब्ध करवाने तथा सदस्यों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने के दृष्टिगत इस जिला में वर्ष 1992 में पर्यटन विकास और सरकारी सभा का गठन किया गया है। जो कि हिमाचल प्रदेश में इस प्रकार की सर्वप्रथम सहकारी सभा है।

सभा का मुख्य उदेश्य पर्यटकों को अपने सूचना केन्द्र के माध्यम से पर्यटन से सम्बधित सूचना उपलब्ध करवाने के साथ-साथ घाटी के भीतरी भाग जो कि पर्यटन की दृष्टि से अति रमणीय स्थान है; में पर्यटकों को ले जाने व आवासीय सुविधा उपलब्ध करवाने और यहां के रीति-रिवाज खान-पान के साथ-साथ साहसिक पर्यटन को बढ़ावा देना है।

सभा ने गत वर्ष मनाली स्थित कार्यालय के माध्यम से 2,61,760.00 रुपये का विपणन कार्य किया गया जिस पर 44725/-रुपये कमीशन के रुप में अर्जित किए। सदस्यों की संख्या 66 है और भागधन की राशि 1,54,000.00 है। इस समय सभा के सदस्यों द्वारा निर्मित होटल, गैस्ट हाउस तथा हट्स में 105 बिस्तरों की सुविधा उपलब्ध है।

सभा द्वारा मध्यम वर्ग के पर्यटकों को ज़िला में पर्यटन स्थलों पर सरकार द्वारा घोषित अतिरिक्त गृह योजना के अन्तर्गत सस्ती और बढ़िया आवासीय सुविधा उपलब्ध करवाने की ओर विशेष पग उठाया जा रहा है।

सभा द्वारा ज़िलों में ट्राउट मछली पालन व विपणन कार्य आरम्भ करने की योजाना बनाई गई है। इस योजना के अन्तर्गत घाटी के दो हज़ार कृषकों को लाभान्वित करवाना है। इसके अतिरिक्त कुल्लू ज़िले में दो अन्य पर्यटन सहकारी सभाओं का गठन किया गया है जो मुख्यत: साहसिक पर्यटन को बढ़ावा दे रही है। इसके अन्तर्गत देश के विभिन्न स्कूली छात्रों को मनाली नेहरू कुण्ड स्थित प्रशिक्षण केन्द्र में चट्टानों में चढ़ने का प्रशिक्षण दिया जाता है।

(सहायक पंजीयक, सहकारी सभाएं, कुल्लू।)

टूटता प्रवाह

जीवन की
विषमताओं को
देखकर
कितनी ही बार
मेरे अंतर्मन ने
पूछा है मुझ से
क्यों बन रहा
यह जीवन
इतना कठिन?
प्रकृति में है
सब कुछ
जीवन के अनुकूल
कहीं भी
नहीं है विरोध
फिर क्यों
लग रहा प्रश्नचिन्ह
अस्तित्व पर
जीवन के?
क्यों टूट रहा
प्रकृति का
सहज प्रवाह
और
जीवन बन रहा
एक विवशता?

-सुरेन्द्र 'सूरी'

"बे'स्हि:" - एक उत्कृष्ट सहकार

- एस० लोनछेन्पा

आज जिस प्रकार सहकार-सहकारिता - सहकारिता आन्दोलन आदि बड़े-बड़े शब्दों को लेकर जो बड़ी बड़ी बातें की जाती है तो ऐसा भ्रम होता है मानो यह सब आधुनिक मनुष्य की आधुनिक बुद्धि की ही ईजाद हों। सच तो यह है कि सहकार की मूल भावना बहुत प्राचीन है, हां आज इस की प्रवृत्तियां और दिशाएं अवश्य बदल गई है। हमारे आदिम समाजों ने अति प्राचीन काल में ही इस मूल भावना को पहचान लिया था। उन की परिस्थितियों ने उन्हें मिल जुल कर काम करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने इसे मनसा-वाचा-कर्मणा सह स्वीकारा और अपने विषम यथार्थ जीवन में इसे बड़ी कुशलता से ढाला। यदि इस तथ्य का नज़ारा करना हो तो दूर जाने की आवश्यकता नहीं, पुरातन लाहुली समाज पर एक दृष्टि डालने भर से ही यह बात स्पष्ट हो जाती है।

लाहुल का समाज वस्तुत: सहकार भाव का एक जीवन्त उदाहरण है। समाज में व्यक्ति के बाद परिवार ही सब से छोटी सामाजिक इकाई होती है। लाहुली परिवार की संरचना ही अपने आप में सहकार भाव की मिसाल है, इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि किस गहराई तक यह भावना यहां के लोगों की रगों में रची बसी होगी।

यहां परिवार संरचना या उस जैसे अनेक अन्य विषयों का विवेचन अभिप्रेत नहीं है, अपितु लाहुल में जो श्रम व्यवस्था अतीत में थी और जो आज तक चली आ रही है, उस के सहकार पक्ष का विश्लेषण भर अभीष्ट है। यहां के पुरखों ने प्राचीन समय से ही अत्युत्तम श्रम प्रबन्धन कायम किया था जो सहकारिता का ही एक और उदाहरण है। इस व्यवस्था को *"बे'स्हि:"* नाम दिया गया है। यह शब्द पटनी बोली के *"बे'सि"* शब्द का ही वर्धित रूप प्रतीत होता है जिसका अर्थ है 'बढ़ना'। अर्थ तत्व की दृष्टि से भी यही बात पुष्ट होती है। *"बे'स्हि:"* में संख्या वृद्धि का भाव स्पष्ट है।

"बे'स्हि:" वास्तव में एक सम्पूर्ण श्रम-प्रबन्ध-व्यवस्था का नाम है। इस में होता यह है कि जब खेती-बाड़ी के काम शुरु हो जाते है तो गांव के प्रत्येक परिवार से आवश्यकतानुसार जितने भी व्यक्ति उपलब्ध हो सकते हों वे सब एक ही व्यक्ति के खेतों में काम पर लग जाते है और बड़ी सहजता से कठिन काम निपटा देते है। इसी प्रकार क्रम से प्रत्येक परिवार के यहां सामूहिक श्रम द्वारा फसल बुआई-कटाई आदि जो भी काम हों, वे सम्पन्न किये जाते है। छोटे गांवों में तो पूरा गांव एक ही घर में जुट जाता है जब कि बड़े गांवों में अपने पसंदीदा समूहों में *"बे'स्हि:"* करते है। प्राय: सभी काम अतीत में इसी प्रणाली से किये जाते थे। इस प्रकार गांव में कभी श्रमिकों की कमी नहीं रहती थी और न ही बाहर से अतिरिक्त श्रमिकों की आवश्यकता रहती थी। गांव श्रम क्षेत्र में पूर्ण आत्म निर्भर हुआ करता था।

इस व्यवस्था की खास विशेषता यह है कि प्रत्येक घर के *"बे'स्हि:"* करने वाले लोग जिस जिस घर में काम करते है, अपने कार्य दिवसों की गणना कर लेते है और उस उस घर से उतने उतने कार्यदिवस अर्जित करते है और उन कार्यदिवसों की आवश्यकता एवं परस्पर सुविधानुस. एक साथ या किश्तों में वसूली भी करते है। श्रम की वसूली वैसे तो श्रम के रूप में ही की जाती है। प्राय: किन्हीं वस्तुओं के बदले या बैलों की जोड़ी के कार्य के बदले में भी श्रम प्राप्त किया जाता है। यदि किन्हीं कारणों से कोई श्रम अदा करने में असमर्थ हो या इस की आवश्यकता न रह जाए तो उसे अर्जक को यथेष्ट दिहाड़ी देकर श्रम-ऋण अदा करना पड़ता है। इस मायने में लाहुल का *"बे'स्हि:"* और कुल्लू आदि अन्य पहाड़ी क्षेत्रों में प्रचलित इसी प्रकार की व्यवस्था *"जोआर"* से भिन्न है। कुल्लू में भी "जोआर" काफी अधिक प्रचलन है लेकिन यहां कार्य दिवसों का इस तरह हिसाब नहीं रखा जाता। कोई अधिक "जोआर" भी करा सकता है तो कोई कम। यहां किए गए श्रम को गणितीय आधार पर चुकता करना आवश्यक नहीं होता।

लाहुल की परिस्थितियां प्रकृत्य: ऐसी विकट थीं, आज भी है, कि इन्होंने पुख्ता तौर पर इस प्रकार की सहकारिता को प्रेरित किया। पूरे वर्ष भर की खाद्य सामग्री एवं पशुओं के लिए पूरी सर्दियों का घास-चारा पांच-छ: महीनों में जुटाना होता है। यहां समय अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हर काम निश्चित समय पर हो ही जाना चाहिए। अन्य क्षेत्रों में (निचले) कोई काम हफ्ता-दस

दिन आगे-पीछे हो भी जाए तो कोई विशेष अंतर नहीं पड़ता। लेकिन यहां एक हफ्ते का जोखिम लेना भी मौत को दावत देने के समान सिद्ध हो सकता है। अत: हर काम की समय सीमा तय रहती है। इसी लिए कठोर परिश्रम भी करना पड़ता हैं। इन परिस्थितियों में यहां के लोगों ने *"बे'स्हि:"* के रूप में एक अत्युत्तम श्रम प्रणाली का आविष्कार किया जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है।

"बे'स्हि:" का सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक पक्ष भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। इस तरह जब सामूहिक कार्य होते हैं तो उन का एक विशेष अन्दाज़, नाज़ो-नज़ाकत भी विकसित हो जाता है जो किसी स्थान के लोक जीवन की झलकियों को बड़ी सहजता और खूबसूरती से प्रतिबिम्बित करता है। हर कार्य और उसकी नज़ाकत का विवरण कहने लगें तो बात बहुत लम्बी हो जाएगी। यहां बुआई के समय की एक झलक ही काफी होगी। बुआई हो रही है, आगे-आगे चुस्त-दुरुस्त बैलों की जोड़ी, सींगों पर तेल मला हुआ और गेंदे का सूखा फूल बंधा हुआ, खेत को जैसे पलटते हुए, जोत रहे हैं! *"हाड़ी"* अर्थात हलवाहा *"ला: लस्सो..."* गीत गाता हुआ बैलों को नाना उपमाओं से विभूषित करता, उकसाता, बेली की शाखा दिखा डराता चलता। पीछे पीछे दस-बीस स्त्रियां खेत में मिट्टी के ढेले अपनी कुदाली से तोड़ती, शनै: शनै: मन्थर गति से आगे बढ़तीं। जेबों में भुने हुए *"ज़द"* (नंगा जौ की एक किस्म) के दाने, रह रह कर समय मिलते ही उनका चर्वण! समवेत गति से कुदालियों का दाएं-बाएं ढेलों पर पड़ना और उस चोट से उत्पन्न वह थप-थप ध्वनियां, (सुनता हूं, कुदाली की दाएं-बाएं की मार के साथ एक लय ताल पर शायद *"होबुड़ु बाले - सोबुड़ु बाले"* जैसा कुछ गाया भी करतीं थीं) उस पर कमर पर लटकी *"फोलुणु"* (घुंघरू) की रुन-झुन संगीत लहरी, यदा कदा हंसी के ठहाके, क्या-क्या गिनूं! क्या समां होता होगा! (काश! कि मैं उस दौर में जन्मा होता!!) सच है, जब कुछ चीज़ें ऐसी विलक्षण परम्परा का रूप ले लेती हैं तो वे लोक संस्कृति का अटूट हिस्सा-बिरसा बन जाती हैं। यहां एक और बात जो स्वत: मुखरित हो उठती है, वह है लाहुल की नारी का अदम्य कर्मठ स्वरूप! अपने लिए कुछ न चाह कर घर-परिवार के उत्थान के लिए जी-जान लगा देने की वह उत्कट भावना स्तुत्य है।

इन सामुदायिक कार्यों के समय हंसी-मज़ाक के क्षण भी भरपूर मिलते हैं। सुख-दु:ख से ले कर हास-परिहास तक की विस्तृत गुंजाईश यहां रहती है। इस तरह व्यक्तिगत तनाव को मन में दमित होने की बजाए बाहर निकलने का मौका और मार्ग मिल जाता है, जिस से घर परिवार से ले कर सामाजिक जीवन तक में मानसिक स्वच्छता और सहजता के लिए उर्वर परिवेश बनाए रखने में सहायता मिलती है। मानसिक स्वस्थता के महत्व को सब स्वीकार करते हैं पर सहकार की आज की अवधारणा में इस मानसिक पक्ष को दर-किनार सा कर दिया गया है। आज का सहकार मात्र आर्थिक सहकारिता पर ही अधिक बल देता है और उसे ही सहकारिता कहता फिरता है, जिससे सहकारिता अपनी व्यापकता को सर्वत्र खोने लगा है और कुंठित होकर सिर्फ वणिग्वृत्ति की ओर अग्रसर नज़र आती है।

लाहुल में *"बे'स्हि:"* की परम्परा आज भी जीवित और चलन में है लकिन पहले जैसी सघनता और व्यापकता अब नहीं रह गई है। सर्वत्र इस परम्परा का विरलन हुआ है। कारण, आज के युग की तेज़ रफ्तारी और गला काट स्पर्धा! बहुत से गैर-परम्परागत नकदी फसलों के क्षेत्र में आगमन ने स्थिति को और उलझाया। कृषि के अतिरिक्त भी अनेक व्यवसाय लोगों के लिए खुले। परिणामत: अपरिहार्य हुए, बाहर से श्रम शक्ति के आयात आदि ने इसे कुछ हद तक नेपथ्य की ओर धकेलने का काम किया है। लेकिन इसकी महत्ता इतनी अधिक है और इसके संस्कार इतने गहरे हैं कि एक लाहुली के लिए इस व्यवस्था को त्याग देना सहज सम्भव नहीं है। अपनी शाश्वत महत्ता के कारण यह आज भी पूर्ण प्रासंगिक और जीवन्त है।

सहकारिता एक जन आन्दोलन बनना चाहिए क्योंकि आम आदमी, विशेषकर किसानों का भविष्य सहकारी संस्थानों को चलाने वाले समर्पित लोगों के हाथों में सुरक्षित हो सकता है।

– वीरभद्र सिंह

कुल्लू ज़िले में सहकारिता के बढ़ते चरण

-डॉ० सूरत ठाकुर

सृष्टि सृजन के बाद जब आदि मानव ने जन्म लिया, तब से मानव हमेशा सुरक्षा की खोज में रहा है। परिणामस्वरूप मानव ने समूह में रहना प्रारम्भ किया, एक दूसरे के सुख-दु:ख में साथ निभाने लगा। इकट्ठे रहना, खाना-पीना, नाचना गाना, आशा-निराशा में एक दूसरे के साथ सामन्जस्य बिठाना मनुष्य ने समूह में रहकर ही सीखा। इसी तरह जीविकोपार्जन के लिए मिल-जुल कर काम करना शुरु किया। मिल-जुलकर कमाए गए धन को आपस में बराबर बांटने पर पूरे समूह की प्रगति देखकर मनुष्य ने सहकारिता की भावना को बढ़ावा देना शुरु किया।

वास्तव में इकट्ठे मिलकर समभाव से आर्थिक प्रगति करना ही सहकारिता है। एक दूसरे पर निर्भरता को ही सहयोग कहा गया है। इसी सहयोग की भाव धारा से ही सहकारी क्षेत्र का सृजन हुआ है। समय के साथ-साथ इसे अधिक व्यवहारिक एवं उपयोगी बनाया जा रहा है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व ही भारत में सहकारी समितियों का गठन होने लगा था। हमारे प्रथम प्रधानमंत्री स्व० जवाहर लाल नेहरू सहकारिता के हिमायती थे। उनका विश्वास था कि अमीर गरीब की दूरी कम करने में केवल सहकारिता ही सफल हो सकती है। सहकारिता क्षेत्र पूंजीपतियों तथा धन्नासेठों की तिजोरियां भरने की बजाय मज़दूरों को उनकी मेहनत का प्रतिफल देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसमें लाभ एक व्यक्ति की जेब में न जाकर सभी हिस्सेदारों में विभक्त होता है। समाजवाद का मुख्य उद्देश्य भी सहकारिता है। सहकारिता क्षेत्र में लगा उद्यम किसी एक का न होकर सांझी सम्पत्ति होती है और सामूहिक तालमेल और परस्पर समन्वय की भावना सहकारिता से ही जागृत होती है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का कथन है कि "एक परिवार के सभी सदस्य उतने ही स्वश्रित होते है जितने कि वे एक दूसरे पर निर्भर करते है। वहां यह मेरा - यह तेरा जैसी भावना नहीं होती। वे सभी सहकारी होते है। इसी प्रकार जहां एक समाज, एक राष्ट्र अथवा समस्त मानवता को एक कुटुम्ब के रूप में लेते है तो सभी व्यक्ति सहकार कर्त्ता बन जाते है।"

सहकारिता के प्रमुख सिद्धान्त है - खुली सदस्यता जिसमें हर वयस्क भारत का नागरिक सदस्य बन सकता है। प्रजातान्त्रिक नियन्त्रण जिसमें प्रजातान्त्रिक विधि से कार्यकारिणी एवं पदाधिकारियों का चुनाव होता है। पूंजी पर सीमित लाभ सहकारिता की विशेषता है। संरक्षण लाभांश, परस्पर सहयोग तथा सहकारिता शिक्षा का प्रचार सहकारिता के मूलभूत सिद्धान्त है। नेतृत्व तैयार करने में भी सहकारिता अग्रणी भूमिका निभाती है।

कुल्लू जनपद की संस्कृति में यत्र-तत्र कई स्थानों पर सहकारिता के रूप देखने को मिलते है। यहां के समस्त गांवों में देवी-देवताओं की पूजा अर्चना सामूहिक कार्य करने की परम्परा आम है। गांवों में जुआरी की प्रथा भी सहकारिता का ही एक अनोखा रूप है। जब भी किसी के गृहनिर्माण का कार्य होना होता है, जमीन खुदाई का काम करना होता है, खेती-बाड़ी का काम समेटना होता है, घास कटाई या लकड़ी इकट्ठी करनी होती है ऐसे हर अवसर पर जुआरी की परम्परा है। परिणमस्वरूप गांव वालों के काम हंसी-खुशी से निपट जाते है।

पांच-छ: दशक पूर्व यहां के अधिकांश गांव की भूमि देवता के नाम ही होती थी। उसी के नाम से गांव वासी भूमि को जोतते थे। प्राचीनतम गणतन्त्र मलाणा गांव में आज भी सारी भूमि देवता जमलू की जागीर है। गांव वासी उसके मुजारे के रूप में काम करते है। कुल्लू के अधिकांश गांवों में लोगों के पास भेड़-बकरियों के रेबड़ है जिन्हें सर्दियों में ऊंचे चरागाहों में पहुंचाया जाता है इन्हें सामूहिक रूप से लाया और ले जाया जाता है। ऐसे कई उदारण मिलेंगें जो इस क्षेत्र में सहकारिता की ही भावना के प्रतीक है।

स्वतन्त्रता के पश्चात तो कुल्लू जनपद में सहकारिता के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई। इस जिले में हर क्षेत्र में सहकारी सभाएं कार्य कर रही है तथा अपने माल की बेहतरी के साथ-साथ लोगों की आर्थिक स्थिति को सुधारने में कामयाब हो रही हैं। आज कुल्लू में तीन उपमण्डल कुल्लू, बन्जार तथा आनी, चार तहसीलें कुल्लू, बन्जार आनी, निरमन्ड तथा पांच विकास खंड कुल्लू, नगर, बन्जार, आनी तथा निरमन्ड है। इन पांचों

विकास खंडों में सहकारिता को बढ़ावा देने के लिए इन्स्पैक्टर नियुक्त है। पूरे कुल्लू जिले में 31.3.97 तक विभिन्न सहकारी समितियों की स्थिति इस प्रकार है।

कुल्लू विकास खंड में कुल 195 सहकारी सभाएं है जिनमें नॉन एग्रीकल्चर क्रैडिट की 3, प्राथमिक कृषि सहकारी सभा में 31, दुग्ध विपणन सहकारी सभाएं-3 लाईव स्टॉक अर्थात मुर्गी पालन, मछली तथा खरगोश पालन आदि की-3, विद्यालयों के सप्लाई स्टोर-1, परिवहन की-13 महिला बचत-5, हाउसिंग की-2, कन्ज़्यूमर स्टोर-8 लेवर कन्सट्रक्शन-5, महिला बुनकर सहकारी सभा-14, तकनीकी (फल उत्पादन एवं विपणन फूल उत्पादन एवं विपणन आदि) सहकारी सभाएं-12 प्रोसैसिंग सहकारी सभाएं-60 व्यवसायिक (लकड़ी फर्नीचर कृषि औज़ार)सहकारी सभाएं-16 सैलेरी अर्नर्ज़। सहकारी सभाएं-10, बच्चों को पुस्तकें वितरण सम्बन्धी सहकारी सभाएं-7 कार्यरत है।

नगर विकास खण्ड में कुल 95 सहकारी सभाएं ज़िनमें प्राथमिक कृषि सहकारी सभाएं-24 नॉन एग्रीकल्चर क्रेडिट-1, सिंचाई की-1, मुर्गी पालन, खरगोश की-1, विद्यालय सप्लाई स्टोर-1, परिवहन की 4, हाउसिंग-2, कन्ज़्यूमर स्टोर-8, लेबर कन्सट्रक्शन-2, महिला बुनकर-8, फल, सब्ज़ी व फूलों की-5, प्रोसैसिंग की-1, बुनकर सहकारी समितियां-26, लकड़ी फर्नीचर कृषि सम्बन्धी-5, चमड़े से सम्बन्धित-1 सैलरी अर्नर्ज़, बच्चों को पुस्तकें वितरण सम्बन्धी-3 सहकारी समितियां कार्यरत है।

बन्जार विकास खन्ड में कुल 51 सहकारी सभाएं कार्यरत है। जिनमें प्राथमिक कृषि सहकारी सभाएं-31,दुग्ध उत्पादन एवं विपणन की-2, कन्ज़्यूमर स्टोर-2, लेबर कन्सट्रक्शन-1, महिला बुनकर सहकारी सभाएं-3, सैकेन्डरी मार्किटिंग की-7 कृषि औज़ार व फर्नीचर निर्माण की-2, सहकारी समितियां है।

आनी विकास खण्ड में प्राथमिक कृषि सहकारी सभाएं-19, दुग्ध उत्पादन एवं विपणन की-5, कृषि सिचांई की-2, महिला बुनकर की-1, सैकेण्डरी मार्किटिगं की-1, फल सब्ज़ी विपणन की-5, सहकारी समितियां कुल-33 सहकारी समितियां कार्य कर रही है। इसी प्रकार निरमण्ड विकास खण्ड में कुल 25 सहकारी समितियां कार्य कर रही है जिनमें प्राथमिक कृषि सहकारी सभाएं 19, दुग्ध उत्पादन एवं विपणन की-1, सैकेण्डरी मार्किटिंग-1, फल एवं सब्ज़ी उत्पादन विपणन-3, सैलरी अर्नर्ज़-1 तथा बच्चों को पुस्तक वितरण सम्बन्धी-1 सहकारी सभा है।

इनके अतिरिक्त बुनकर सहकारी सभाओं के तैयार माल के विपणन तथा अन्य प्रोत्साहन् हेतु शिखरीय बुनकर समिति का गठन हुआ है। जो प्राथमिक बुनकर सहकारी सभाओं के साथ तालमेल बनाए रखती है। ज़िले की सभी क्षेत्रों में कार्यरत संस्थाओं के मार्गदर्शन, प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन प्रदान करने हेतु ज़िला सहकारी संघ का गठन हुआ है। जिसके सदस्य सभी सहकारी सभाएं है। पूरे ज़िले में कुल 429 सहकारी सभाएं है जिनमें-28 ऋण-निस्तार हो चुकी है, और 401 सही कार्य कर रही है।

बीते वित्तीय वर्ष मार्च, 1997 तक कुल्लू ज़िले में हिमाचल सरकार का भागधन 4,21,71,412 रूपये इन सहकारी सस्थाओं में लगा हुआ है तथा सरकारी ऋण 1,11,37,824 रुपये है। सहकार क्षेत्र में समन्वित सहकारी विकासात्मक कार्यक्रम के लिए 4.85 करोड़ रुपये आवंटित किए है, जो प्रशिक्षण कार्य विस्तार, नाकारा हो चुकी सहकारी समितियों को पुनर्जीवन प्रदान करने के लिए ऋण तथा सबसीडी के रूप में दिया जाएगा। यह परियोजना पांच वर्ष में पूरी होगी।

आजकल सहकारी संस्थाओं के गठन के लिए कम से कम 11 सदस्य होने चाहिए तथा प्रारम्भ में ही कम से कम 20,000 की शेयर पूंजी होनी चाहिए।

इसमें कोई दो राय नही है कि कुल्लू ज़िले में सहकारिता आन्दोलन ने अभूतपूर्व प्रगति की है। लाखों लोग प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से इससे लाभान्वित हो रहे है। यहां स्थानीय प्राकृतिक सम्पदा बहुतायत में है इसलिए इस के दोहन की आपार सम्भावनाएं विद्यमान है।

स्मरण रखो, हमारा राष्ट्र गाँवों में बसता है। लेकिन शोक है, किसी ने उनके लिए कभी कुछ नहीं किया। क्या तुम उन्हें ऊपर उठा सकते हो? क्या तुम उनकी अध्यात्मिक अंतर्चेतना को क्षति पहुंचाए बिना उन्हें उनकी खोई हुई अस्मित वापस दे सकते हो?

– स्वामी विवेकानन्द

सहकारिता के शिखर छूता - भुट्टी वीवर्ज़ सोसायटी

इन्द्र सिंह ठाकुर

'दी भुट्टि वीवर्ज़ प्रोडक्शन कम सेल कोऑप्रेटिव इण्डस्ट्रीयल सोसायटी लिमिटिड, शमशी, कुल्लू हिमाचल प्रदेश' का रजिस्ट्रेशन 18-12-1944 को पंजाब कोऑप्रेटिव एक्ट 1912 के अन्तर्गत रजिस्ट्रार कोऑप्रेटिव सोसायटीज़ पंजाब, लाहौर द्वारा की गई थी। उस समय कुल सभा के 12 सदस्य थे। इस संस्था का निर्माण भुट्टी नामक गांव के लोगों ने किया। यह स्थान कुल्लू से 6 कि.मी. दूरी पर लग वैली में स्थित है। सन् 1944 से 1956 तक यह समिति का कार्य सीमित ही रहा है। इसका मुख्य कारण व्यापारिक साधनों को जुटाने के लिए धन का अभाव था। सभी सदस्य बुनने का कार्य अपने-अपने घरों में बैठकर करते थे। समिति के पास अपना कोई भण्डार नहीं था, न ही बिक्री के लिए उपयुक्त साधन थे। व्यापारिक साधन क़मज़ोर होने के कारण समिति बुनकरों को पूरी मज़दूरी देने में असमर्थ थी। वर्ष 1944 से वर्ष 1956 तक यह इतनी निष्क्रिय हो गई कि उसका नाम मात्र काग़जों पर ही रह गया।

सन् 1957 में स्वर्गीय ठाकुर वेद राम इस सभा के सदस्य बने। उसी वर्ष सभा के सदस्यों ने उन्हें सर्वसम्मति से प्रधान चुना। सभी सदस्यों ने श्री वेदराम ठाकुर की अध्यक्षता में इकट्ठे होकर दृढ़ निश्चय किया। ठाकुर जी ने 1957 में ही संस्था का कारोबार बढ़ाया। सदस्य संस्था, भागधन, कार्यशील पूंजी, बिक्री में वृद्धि की और 1958 में उन्होंने बुनकर सदस्यों के लिए कार्य की अधिक सुविधा जुटाने के प्रयोजन से कार्यशाला और रिहायशी मकान बनाने तथा बुनाई के नवीनतम उपकरण उपलब्ध कराने हेतु एक बड़ी योजना बनाई। *ऑल इण्डिया हैंडलूम बोर्ड* ने उनकी उक्त योजना के लिए ऋण व अनुदान स्वीकृत किया। सन् 1959 में उन्होंने स्वीकृत राशि से 32 बीघे ज़मीन कुल्लू से 7 कि. मी. पीछे जरड़ नामक स्थान पर, जो राष्ट्रीय उच्च मार्ग पर स्थित है, खरीद की। इस ज़मीन पर ठाकुर वेद राम ने बुनकरों को रहने के लिए 78 मकान, 4 कार्यशालाओं का निर्माण किया और 700 के लगभग सेब, प्लम के पेड़ लगाए। इस जगह का नाम *भुट्टी कॉलोनी* रखा। स्वर्गीय ठाकुर वेदराम इस सभा के 1957 से 1971 तक निरन्तर निर्विरोध प्रधान चुने जाते रहे।

ठाकुर वेदराम जी ने बुनकर कॉलोनी वर्क शैड बनाने के बाद इस सभा का उत्पादन बढ़ाया। बिक्री के लिए 8 शोरूम विभिन्न स्थानों पर खोले। 1944 में 12 सदस्यों द्वारा 23 रुपये की कार्यशील पूंजी से आरम्भ की गई संस्था सन् 1971 में सदस्य संस्था 105, भाग धन सदस्य 125400, कार्यशील पूंजी 615222 रुपये, बिक्री 426445 तक पहुंच गई। ठाकुर वेदराम ने इस संस्था की ठोस आधारशिला रखी, जिसके कारण इस संस्था ने आज हिमाचल प्रदेश में ही नहीं बल्कि समूचे भारत में अपना सर्वोच्च स्थान बनाया है।

31 अक्तूबर, 1971 को अचानक आपका निधन मण्डी अस्पताल में हो गया। उनके अकस्मात निधन से सभा को गहरा धक्का लगा। परन्तु उनके सुयोग्य पुत्र श्री सत्य प्रकाश ठाकुर ने स्थिति को सम्भाला। वर्ष 1974 में वे सभा के प्रधान चुने गए। उनकी सक्षम और दक्ष प्रधानता और मार्ग दर्शन के अधीन सभा ने नए आयाम जोड़े।

श्री सत्य प्रकाश ठाकुर ने वर्ष 1978 में कुल्लू में एक सफल सेमिनार का आयोजन किया। जिसमें प्राथमिक हथकरघा बुनकर सहकारी सभाओं को ब्याज पर सबसीडी दिलाई। उसके पश्चात ठाकुर सत्य प्रकाश ऑल इण्डिया हैंडलूम बोर्ड तथा नेशनल हैंडलूम कारपोरेशन के सदस्य बने। ठाकुर जी के प्रयास से प्राथमिक बुनकर सहकारी सभाओं को विपणन विकास सहायता, एवं रिबेट क्लेम सरकार से स्वीकृत कराया तथा विभिन्न स्थानों पर देश के बड़े शहरों में सभाओं द्वारा तैयार माल की बिक्री करने हेतु केन्द्रीय सरकार से *एक्सपो* का आयोजन करवाया। इनके योगदान से सभा के कारोबार में काफी वृद्धि हुई। गरीब व्यक्तियों को और रोज़गार मिला।

इस समय वर्तमान प्रधान श्रीमती प्रेमलता ठाकुर के कुशल नेतृत्व में सभा निरन्तर प्रगति की ओर बढ़ रही है। गत वर्ष 1995 में भारत सरकार द्वारा हथकरघा सहकारिता क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए राष्ट्रीय प्रथम पुरस्कार इस सभा को मिला है। यह पुरस्कार वर्ष 1995 में श्री प्रेमलता ठाकुर, प्रधान सभा, ने तत्कालीन कपड़ा मंत्री से प्राप्त किया है। इस समय सभा सदस्य संख्या 412 है। सभा के पास इस समय 5 वर्क शेड और एक बड़ा शोरूम कॉम्पलैक्स है। सभा सदस्यों के

रहने के लिए कॉलोनी में 95 मकान हैं। सेब व प्लम का बगीचा है। मनाली तथा पालमपुर में शोरूम की बिल्डिंग सभा की है। सभा के बिक्री केन्द्र केलंग, मनाली, कुल्लू, भुट्टी कॉलोनी, भुन्तर, मन्डी, सुन्दरनगर, शिमला, पालमपुर, धर्मशाला, डल्हौज़ी, हमीरपुर, मनीकर्ण, हिमाचल प्रदेश में तथा एक बिक्री केन्द्र मसूरी यू०पी० में है। कुल बिक्री केन्द्रों की संख्या 22 है।

अच्छी क्वालिटी तथा नये डिज़ायनों के कारण सभा की बिक्री प्रति वर्ष बढ़ रही है। सभा के उत्पादन पश्मीना, अंगोरा, ऊनी शालें, चादरें, मफ़लर, टोपियां, ऊनी कोट की पट्टियां, ऊनी कोट, जाकेटें, दरी, विपणन हेतु सभी शोरूम बढ़िया नए फर्नीचर से सुसज्जित किए गए है। वर्ष 1996-97 में सभा सदस्य संख्या 412, भागधन सदस्य 1679839 रुपये, कार्यशील पूंजी 34010909 रुपये, बिक्री 31227471 रुपये तथा लाभ 425991 रुपये का हुआ।

सभा अमूल्य सहयोग के लिए केन्द्रीय सरकार, प्रदेश सरकार कांगड़ा केन्द्रीय सहकारी बैंक, राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम के आभारी है, जिनके योगदान से यह सभा निरन्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर है।

मैं चाहता हूं कि सहकारी आन्दोलन तरक्की के रास्ते पर आगे बढ़े और सम्पूर्ण भारत में छा जाए।

– जवाहरलाल नेहरू

'योर त्यौहार' का मनोविश्लेषणात्मक पक्ष

-राजेन्द्र सिंह, ठोलंग

'योर' लाहुल का एक प्रमुख त्यौहार है। सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से इस त्यौहार का अपना एक विशेष स्थान है। विभिन्न चिन्तकों बुद्धिजीवियों एवं लेखकों ने इस त्यौहार से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने के प्रयास किए है, विशेषकर आचार्य प्रेम सिंह शौण्डा के लेख 'सुरजणी मेला योर' में योर का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक पक्ष अत्यधिक स्पष्टता और कुशलता से उदघाटित किया गया है। यदि सूक्ष्म दृष्टि से योर का अवलोकन किया जाए तो अनेक ऐसे तथ्य सामने आते है जिनका मनोविज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त महत्व है। यह त्यौहार मनुष्यों के मनोग्रन्थियों को खोलने और दमित भावों से मुक्ति प्राप्त करने का सशक्त रंगमंच है। मनोविज्ञान के अनुसार सभी क्रियाओं के मूल में काम वासना रहती है। समाज और सभ्यता के भय से यह कामवासना दमित होकर मनुष्य के अवचेतन मन में चली जाती है और निष्कासन के अनेक अवसर ढूंढती रहती है। और इसे किसी न किसी रूप में अभिव्यक्त कर व्यक्ति अपने दमित भावों का शमन करता है जिससे व्यक्ति अपने अवचेतन मन में छिपे भावों से छुटकारा प्राप्त करता है और तभी व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है।

हमारे पूर्वज भले ही अनपढ़ रहे हों, परन्तु वे मनोविज्ञान के एक महत्वपूर्ण सूझ से अवगत थे उन्हें अपने दमित भावों की अभिव्यक्ति के सरल मार्ग का पता था तथा इन दमित भावों का शमन विभिन्न त्यौहारों, मेलों आदि के माध्यम से करते थे और अपनी मनोग्रन्थियों को खोलते थे।

यदि मनोविज्ञान की दृष्टि से विवेचन एवं विश्लेषण किया जाए तो योर में भी बहुत कुछ ऐसा ही देखने को मिलता है। विभिन्न धार्मिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक अनुष्ठान पूर्ण होने के पश्चात् मोहरों द्वारा मनोरंजन के साथ-साथ मनोग्रन्थियों को खोलने का कार्य प्रारम्भ हो जाता है। पुरुष मोहरा के वेशभूषा में लकड़ी का कृत्रिम लिंग बना होता है तथा वह स्त्री मोहरा के साथ काम सम्बन्धी अनेक कृत्य करता है। अगर पुरुष मोहरे की अभिलाषा दर्शकगण के साथ काम सम्बन्ध कृत्य करने की होती है तो वह उन के साथ काम स्थापित करने में स्वतन्त्र होता है। इस प्रकार के कार्य एवं दृश्य मनोविज्ञान की दृष्टि से अश्लील नही है बल्कि मन में किसी के प्रति दमित भावों का, उस पुरुष तथा स्त्री मोहरा के माध्यम से अभिव्यक्ति एवं शमन है। खुले मैदान अथवा 'सवा' में दर्शकगण द्वारा इन दोनों के कृत्य को देखना, आनन्द लेना व आपस में एक दूसरे के साथ परिहास करना उन दोनों के माध्यम से अपने दमित भावों से छुटकारा पाना है।

योर के अगले दिन स्त्री मोहरा द्वारा बच्चे को जन्म देना और पीड़ा से छटपटाना संतानोत्पत्ति की क्रिया को स्पष्ट करती है। योर के समय गुर द्वारा ग्राहणी लगाना भी भावों का शमन कहा जा सकता है। पहले धूणी, जयकारी आदि के द्वारा उद्दीप्त किया जाता है और तब गुर ग्राहणी लगाता है। ग्राहणी के पश्चात वह न केवल स्वयं ही मन में शान्ति का अनुभव करता है, बल्कि वहां पर उपस्थित जितने भी लोग है उन्हें भी एक असीम शान्ति एवं आनन्द की अनुभूति होती है। यह असीम शान्ति एवं श्रद्धा से भरे आनन्द की अनुभूति, एवं अभिव्यक्ति के फलस्वरूप है।

लाहुल आलू उत्पादक सहकारी विपणन एवं विधायन सभा के कार्याकलापों पर एक विहंगम दृष्टि

- एक रिपोर्ट

28 मई, 1966 को चन्द्रा और भागा नदियों के संगम स्थल तान्दी नामक गांव में लाहौल आलू उत्पादक सहकारी सभा का गठन हुआ। लाहुल के किसानों में इस सहकारी सभा की स्थापना में पूर्ण आस्था और विश्वास था कि इस से उनके क्षेत्र का सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान होगा। जो इस बात से स्पष्ट है कि इसके संस्थापक सदस्यों की संख्या 22 थी जो स्थापना वर्ष में ही 87 तक पहुंच गई। इस सहकारी सभा ने अपने किसानों के बीज आलू का विपणन एक वैज्ञानिक और आधुनिक ढंग से किया। इसका मूल्य निर्धारण की नीति भी अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है। चुने हुए सभा के प्रबन्धक समिति के सदस्यों का दो वर्षों की अवधि के पश्चात चुनाव होता है। सभा की प्रबन्ध समिति के सदस्य अपनी नीति निर्धारित करते है। प्रबन्धक समिति प्रति वर्ष अपनी वार्षिक योजना बनाती है और उसी के अन्तर्गत अपना कार्य सम्पादित करती है।

उद्देश्य

सभा अपने सदस्यों की समाजिक तथा आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए कार्य करती है, जो कि सभा के उपनियमों के अनुसार निम्न है :

1. सभा अपने सदस्यों के लिए कृषि तथा बागवानी की पैदावार को इकट्ठा करना, उसका भण्डारण तथा उसके विपणन का समुचित प्रबन्ध करना।

2. सभा सदस्यों को उन्नत बीज, खाद, कृषि यन्त्र और अन्य आवश्यकतानुसार वस्तुओं का प्रबन्ध करना।

3. सभा अपने सदस्यों की कृषि तथा बागवानी उपज का वर्गीकरण (ग्रेडिंग) तथा प्रक्रिया आदि का कार्य सम्पादन करना।

4. सभा अपने गोदाम तथा शीत-गृह निर्माण का कार्य करना या अपने सदस्यों की कृषि एवम् बागवानी की पैदावार को सुरक्षित तथा वैज्ञानिक ढंग से रखने के लिए किराए पर लेना।

5. सभा सरकार की ओर से कृषि एवम् बागवानी की पैदावार को खरीदने के लिए एक संस्था के रूप में कार्य करे।

6. सभा धरोहरों को प्राप्त करे और सभा के कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए सैंट्रल कोऑपरेटिव बैंक जिससे सभा सम्बन्धित हो अथवा स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया या किसी अन्य बैंक से जो पंजीयक महोदय सहकारी सभाओं द्वारा अनुमोदित हो, से ऋण प्राप्त करके अपने उद्देश्यों को पूर्ण करना।

7. सभा सदस्यों को उनकी उपज की सिक्योरिटी पर अग्रिम राशि प्रदान करना।

8. सभा ऐसे पग उठाये जिस द्वारा सहकारिता के सिद्धान्तों तथा कार्य प्रणाली के ज्ञान का प्रसार एवम् विस्तार हो।

9. सभा अपने सदस्यों को कृषि में हुई नई खोजों और परिवर्तनों के विषय में आधुनिक जानकारियां दे और उनके उत्पादनों का मण्डियों में उपलब्ध मूल्यों की सूचना भी प्रदान करे।

10. इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अन्य गतिविधियां जो इससे सम्बन्धित हो का भी निष्पादन करे।

11. अपने सदस्यों की आवश्यकतानुसार उनकी उपभोक्ता आवश्यक वस्तुओं को बेचने और खरीदने का भी प्रबन्ध करे।

12. अपने सदस्यों, ग्राहकों तथा अन्य की आवश्यकतानुसार ठहरने के लिए होटल की सुविधा का प्रबन्ध करे।

13. सभा अपने सदस्यों के कृषि एवम् बागवानी उत्पादनों की प्रक्रिया (प्रोसेसिंग) के लिए उद्यम (इंडस्ट्रीज़) स्थापित करे।

14. सभा ऐसे औद्योगिक इकाईयों के भाग खरीदे, जिस द्वारा सदस्यों की विशिष्ट कृषि उपज पैदा की जाए जिससे सदस्यों और क्षेत्र का आर्थिक विकास हो।

आलू विपणन

जैसा कि नाम से ही विदित है कि इस संस्था का मुख्य उद्देश्य अपने उत्पादकों को उनके उत्पादन जिसमें मुख्य बीज आलू का सही विपणन करवाकर एक ओर अपने सदस्यों को बिचौलिओं के शोषण से बचाना है तो दूसरी ओर देश की विभिन्न मण्डियों के किसानों को सही, बीमारी रहित, कृषि विभाग द्वारा प्रमाणित बीज आलू उपलब्ध करवाना है। बीज आलू देश के विभिन्न क्षेत्रों को भेजा जा रहा है, जिनमें मुख्यत: गुजरात, मध्य प्रदेश, पंजाब, अरुणाचल प्रदेश, पश्चिमी बंगाल

और सुदूर दक्षिण में कर्नाटक तक इसकी मांग है। हिमाचल प्रदेश के ही विभिन्न ज़िलों में भी बीज आलू ले जाया जाता है।

इस घाटी के आलू उत्पादन के लगभग 70 प्रतिशत का इस सभा द्वारा विपणन किया जाता है। इस घाटी का सारा आलू मनाली में एकत्र करके जहां "मार्किटयार्ड" है जो "आलू ग्राऊंड" के नाम से मशहूर है। वहां इसका वर्गीकरण (ग्रेडिंग) और तोलकर बोरियों में भरकर तथा उसपर सभा का "लेबल" "एल॰पी॰एस॰" लगाकर विभिन्न मण्डियों में मांग के अनुसार भेजा जाता है। सभा बीज आलू का भाव भी निश्चित करती है। जो कि सहकारी क्षेत्र की एक बड़ी उपलब्धि है। जब सारा आलू बिक जाता है तो तोल और ग्रेडिंग के अनुसार किसानों को उसका पूरा मूल्य मार्च महीने के पश्चात जब बिक्री का पैसा आ जाता है, चुकाया जाता है। प्रारम्भ में किसानों को उनकी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए अग्रिम राशि (एडवांस) उनके लिए बीज आलू प्राप्त करने पर दी जाती है।

सभा बीज आलू का भाव एक विशेष प्रणाली द्वारा निर्धारित करती है। सभी उत्पादक सदस्यों के बीज आलू का वर्गीकरण के हिसाब से एक औसत मूल्य निकाला जाता है और सभी उत्पादक सदस्यों को उसी हिसाब से मूल्य चुकाया जाता है यह बहुत ही सफल प्रयोग रहा है। यही कारण है कि यहां के किसानों का कुछ भी पैसा सभा की ओर नहीं रहता और सारा पैसा नकदी या उपभोक्ता वस्तुओं के रूप में जैसे भी कृषक सदस्य लेना चाहे, ले सकता है। इसमें साधारण कृषक सदस्य और सभा के प्रबन्धक समिति के सदस्यों में किसी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं बरता जाता जो सभा के कार्य प्रणाली को सदस्यों में लोकप्रिय बनाता है।

फ़ाऊंडेशन सीड

सभा लाहुल में अपने कृषकों को उत्तम प्रकार का प्रमाणित बीज उपलब्ध करवाती है। साथ ही कृषि सम्बन्धी आधुनिक जानकारी भी अपने किसानें को समय-समय पर प्रदान करती है।

लाहुल का किसान आधुनिक (फार्म मैनेजमैंट) खेती के प्रबन्ध को बहुत अच्छी प्रकार समझता है और जहां से उसे अपनी उपज का अधिक मूल्य मिले उसकी ओर अग्रसर हो जाता है। लाहुल की मिट्टी और जलवायु के साथ-साथ "हरे मटर", "हॉप्स" और "केसर" आदि की खेती के लिए भी उपयुक्त है। जिससे किसानों को आलू की अपेक्षा अधिक आय होती है। इसलिए किसानों ने आलू की खेती कम करके "हरे मटर" और "हरे मटर" और "हॉप्स" की खेती भी प्रारम्भ कर दी है।

फल तथा सब्जी परियोजना

सभा के विभिन्न क्षेत्रों में सुचारू कार्य प्रणाली से राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (एन॰सी॰ डी॰सी॰) जो भारत सरकार कृषि मंत्रालय के अन्तर्गत राज्यों में सहकारी विकास योजनाओं में वित्तीय सहायता प्रदान करती है व राज्य सरकार विशेष प्रभावित हुई। और यह निर्णय लिया गया कि ज़िला लाहुल स्पिति और कुल्लु ज़िले में सभा यहां के फल व सब्जी उत्पादकों के फल व सब्जी का सुचारू ढंग से विपणन करवाने में भी अपना योगदान दें। इसके लिए यह अनुभव किया गया है कि इस कार्य को उपयुक्त ढंग से कार्यान्वित करने के लिए निम्न मुख्य सुविधाएं बनाएं -

1. क्लैक्शन सैंटर
2. पैकिंग व ग्रेडिंग हाऊस
3. शीत भण्डार (कोल्ड स्टोर)

इस प्रोजेक्ट के अन्तर्गत हरियाणा के जिला सोनीपत में कुण्डली नामक स्थान पर 5000 मिट्रिक टन क्षमता का शीत गृह (कोल्ड स्टोर) बनाने के कार्यक्रम की योजना है। इस पर लगभग 140 लाख रु॰ की लागत का अनुमान है।

उपरोक्त परियोजना को चलाने के लिए एन॰सी॰डी॰सी॰ व राज्य सरकार ने इस सभा को 243 लाख रुपये की वित्तीय सहायता की स्वीकृति दी है।

उपभोक्ता वस्तुओं का व्यापार

सभा आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं का भी व्यापार करती है। सभा ने देश की कुछ प्रमुख कम्पनियों की एजैन्सी भी ले रखी है। जिसमें मुख्यत हिन्दुस्तान लीवर्ज लि॰, लिपटन इण्डिया लि॰, मोदी टायरज़ व जीप इण्डस्ट्रीज़ इत्यादि।

सभा अपने सदस्यों को लाहुल घाटी में स्थित उनके घरों तक अपने वाहनों द्वारा खाने पीने का सामान जैसे चावल, आटा, दालें, चीनी, चाय, वनस्पति तेल,

सरसों का तेल आदि उनकी आवश्यकतानुसार उन द्वारा भेजे गए मांगों के अनुसार पहुंचाती है। इस सामान का मूल्य सदस्यों द्वारा बीज आलू सभा के माध्यम से बिक्री के हिसाब से काटा जाता है।

सभा अपने सदस्यों व कृषकों को व्यापारियों से मनमाने मूल्य न वसूलने के लिए एजैन्सी वस्तुओं के वितरण के लिए एक गोदाम व दुकान कुल्लू में और एक दुकान मनाली में चला रखी है, जिस में सभी प्रकार की उपभोक्ता वस्तुएं उचित मूल्यों पर उपलब्ध है। इसके साथ ही सभा ने उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के लिए तीन स्थानों पर यथा केलंग (ज़िला का मुख्यालय), उदयपुर और मूरिंग में अपनी दुकानें खोल रखी है। इसके अतिरिक्त सभा निकट भविष्य में गैमूर और गुन्धाला नामक स्थानों पर भी अपनी दुकानें खोलने पर विचार कर रही है।

माल परिवहन शाखा

सभा के पास माल ले जाने के लिए 7 वाहन हैं तथा डीज़ल और पैट्रोल के दो टैंकर है। इसके अतिक्ति सभा निजी वाहन भी किराए के लिए इस्तेमाल करती है।

मिट्टी के तेल का वितरण

सभा लाहुल घाटी में मिट्टी के तेल को भी अपने वाहनों पर ला कर वितरित करवाती है।

पैट्रोल व डीज़ल

सभा ने लाहुल घाटी में तांदी पुल के पास अपना पम्प खोला है, जिससे कि घाटी में आए वाहनों व सैलानियों को अपनी गाड़ियों में पैट्रोल भरने की सुविधा हो।

खाद की बिक्री

सभा अपने सदस्य किसानों को उनकी उपज बढ़ाने के लिए रासायनिक खाद का भी वितरण करती थी। सभा ने लाहुल घाटी में खाद वितरण का कार्य 1986-87 तक किया। उसके बाद हिमाचल प्रदेश राज्य सहकारी विपणन संघ (हिम फैड) शिमला ने सभा की सहमति से यह कारोबार अपने हाथों में ले लिया।

पटसन की बोरियों का व्यापार

सभा अपने सदस्यों का बीज आलू और मटर आदि को मण्डियों में भेजने के लिए बोरियां खरीद करती है।

घरेलू गैस व्यापार

सभा लाहुल में भारतीय तेल निगम के सौजन्य से घरेलू गैस के कनैक्शन देती है और उपभोक्ताओं को गैस और चूल्हे उचित मूल्य पर उपलब्ध करवाती है।

मशरूम (खुम्ब) प्रोजेक्ट

कुल्लू वैली एग्रो इण्डस्ट्रीज की स्थापना 2अगस्त 1978 को कम्पनी एक्ट के अन्तर्गत पंजीकरण हुआ था। यह राष्ट्रीय मार्ग न० 21 ब्यास नदी के किनारे, रायसन में स्थित है! इसकी भूमि का रकवा 7 बीघा है जो कि हिमाचल सरकार से 31 साल की अवधि 1978-2010 तक लीज़ पर अनुबन्धित है। इस कम्पनी का कार्यक्षेत्र खुम्ब उत्पादन और विद्यायन तथा फल विद्यायन है।

सन् 1988-89 में एल०पी०एस० और उपरोक्त कम्पनी के प्रबन्धकों के बीच एक अनौ-पचारिक सम्मेलन हुआ और यह निर्णय लिया गया कि कम्पनी का समस्त प्रतिभूति और अचल सम्पति एल०पी०एस० ने निम्नलिखित वित्तीय दायित्वों को चुकाकर कम्पनी को अपना उपक्रम बनाया तत्पश्चात एल०पी०एस० ने 1990 से कम्पनी का पूरा प्रबन्ध अपने अन्तर्गत लिया और खुम्ब विशेषज्ञों के निरीक्षण पर निम्नलिखित त्रुटियों को बुनियादी रूप से निवारण करने का प्रयत्न किया।

1. खुम्ब खाद नीजीकरण कक्ष का त्रुटि पूर्ण निर्माण।
2. यंत्र संयत्र की आपूर्ति।
3. अनिश्चित विद्युत और विकल्प की कमी।

1. कम्पनी का अस्थाई कर्ज़ा	3,21,647.00
2. समस्त प्रतिभूति की राशि जोकि 4,80,000.00 थी	3,95,000.00
3. न्यू बैक ऑफ इन्डिया का ऋण	31,12,300.00
कुल राशि	38,28,947.00

तत्पश्चात एल०पी०एस० ने 1990 से कम्पनी का पूर्ण प्रबन्ध अपने अन्तर्गत लिया और खुम्ब विशेषज्ञों के निरीक्षण प निम्नलिखित त्रुटियों को बुनियादी रूप से निवारण करने का प्रयत्न किया।

1. खुम्ब खाद नीजिकरण कक्ष का त्रुटि पूर्ण निर्माण।
2. यंत्र सयंत्र की आपूर्ति।
3. अनिश्चित विद्युत और विकल्प की कमी।

(एल०पी०एस० रिपोर्ट - 1995 से उद्धृत)

शाशुर छेशु में छम

- नोरबु रिनचेन

वैसे छम भारत में होने की कोई पुष्टि नहीं हुई है। छम का पूरा नाम 'गरछम' है जो 'गर' और 'छम' के योग से बना है। 'गर' का अर्थ है नाच तथा 'छम' का अर्थ है ताल के साथ कदमों को मिलाना अर्थात् 'रोलमो' खड़ताल तथा 'ङ' मृदंग के साथ कदमों को मिलाना। 'गर' भारत में कालचक्र आदि के विधि विधान में पाया जाता है।

तिब्बत में 'समये' महा विहार निर्माण के समय दुष्ट भूत-प्रेत, राक्षस आदि सब इस निर्माण से नाराज़ थे। दिन के समय जितना काम होता था, रात को उक्त दुष्टों द्वारा नष्ट कर दिया जाता था। इस बीच भारत से तांत्रिक गुरू पद्मसम्भव तिब्बत पहुंचे थे और उन्होंने 'समये' महाविहार के चारों ओर कील गाड़ कर लकीरें खींच दी। उन्होंने 'जनग' काली टोपी व 'छमगोई' छम करते समय पहना जाने वाला वस्त्र पहन कर तांत्रिक छम किया और दुष्टों को नष्ट कर दिया। इसके बाद दुष्ट विहार निर्माण में विघ्न नहीं डाल सके। तब से लेकर छम की एक परम्परा चल पड़ी।

कालान्तर में 'लुङ' पलगी दोरजे' नामक तान्त्रिक लामा ने इसी वेश-भूषा में तिब्बत के दुष्ट राजा, बौद्ध धर्म के दुश्मन 'लंगदर्मा' को छम करते हुए तीर मार कर उसका वध कर दिया था। तत्पश्चात् ल्हासा के पोटाला में और अन्य बौद्ध विहारों में भी छम का आयोजन किया गया।

इसी प्रकार लाहुल में भी शाशुर गोम्पा में छम का आयोजन किया जाता है। यहां पर पहले छम नहीं था। बाद में गुरु पद्मसम्भव की जयन्ती पर छम का आयोजन किया जाना आवश्यक समझा गया। उसके बाद निरन्तर मनाया जा रहा है। इस दिन 'महाकाल.' नामक धर्मपाल की पूजा की जाती है। छम उस तन्त्र में महाकाल के काय मण्डल के परिवार द्वारा वाक् मण्डल व चित्त मण्डल के परिवारों को पूजने और मनोरंजन के स्वरूप को प्रस्तुत करते हैं।

इस छम के दो खण्ड हैं। इसमें प्रथम को 'बग छम' और दूसरे खण्ड को 'ज़ोर छम' कहते हैं। बग छम में लामा विभिन्न धर्मपालों के मुखौटे पहन कर छम करते हैं। आरम्भ में यम राजा और रानी का युगल छम होता है। उस के बाद 'तुरदग' चार कंकाल छम होता है। इस में पहले केवल छम होता है। दूसरी बार वे शत्रु का रूप या आकार ले कर आते हैं और छम भी करते है। इस के बाद समूह छम होता है। इस में कुल बारह व्यक्ति होते हैं। इन में मुख्य महेश्वर 'वंग चुग छेनपो' तथा उमा देवी होती है और उस के बाद सिंह मुख, यम राजा और रानी, वानर, नर-नारी, द्वारपाल तथा काक मुख आदि।

दूसरे खण्ड 'ज़ोर छम' में 'जनग' काली टोपी और 'छम गोई' छम करते समय पहना जाने वाला वस्त्र पहन कर छम करते हैं। इस में तांत्रिक विद्या द्वारा शत्रु या विघ्न को नष्ट करने का नियम है। इसमें पहले कंकाल मुखौटा वालों द्वारा लाए हुए शत्रु के उस रूप या आकार को नष्ट किया जाता है। यह शत्रु का रूप या आकार बाहरी और आन्तरिक धार्मिक विघ्न को दूर करने का विधान है। इसके बाद 'ङ छम' मृदंग के साथ नृत्य किया जाता है। यह भी लगभग आधे घण्टे तक् चलता है। इन छम के साथ-साथ पाठ भी किया जाता है। मुखौटा रखने का कमरा 'छम खङ' से मुखौटा पहने लामों को बाहर निकलते समय स्वागत करने तथा भीतर लौटते समय आभार व्यक्त करने के लिए 'ङ', मृदंग, 'रोलमो' खड़ताल आदि बजाया जाता है। अन्त में लामा लोग ङ, रोलमो आदि बजाते हुए पदताल के साथ 'जष्टग् रिम्बोछे' की मूर्ति को भीतर ले जाते हैं।

इस प्रकार छम से एक दो दिन पहले महाकाल का पूजा-पाठ करते हैं। अन्तिम दिन 'तोरमा' जो तिकोने और नुकीले सिरों वाला बलि बनाया जाता है, को मन्त्र के साथ बाहर फैंक दिया जाता है। इस का महत्त्व साधारणतया यह माना जाता है कि सभी प्राणी मात्र तथा यजमानों को वर्ष में शत्रु विघ्न न आने के लिए और समय पर वर्षा और उत्पादन अच्छे होने के लिए इस पूजन का आयोजन किया जाता है। इस के अतिरिक्त छम में देवी देवताओं के मुखौटे पहनने से अपने देवी देवताओं को पहचान कर मृत्यु काल में भयभीत नहीं होना है। कोई भी श्रद्धालु व्यक्ति जो इन मुखौटों और छम का दर्शन करता है, उसके इस जीवन में नाना विघ्न दूर होंगे और मृत्यु के बाद दुःख के भय से मुक्त हो कर सुख की प्राप्ति हो सकेगी। इस प्रकार मंत्र विद्या में अनेक प्रकार के उपकार और हित प्राप्त होने का दावा किया गया है।

व्यूंस - लाहुल-स्पीति का कल्पवृक्ष

-अजय सिंह गेमुरफेमा

व्यूंस, वेली अथवा *विलो* के नाम से प्रसिद्ध वृक्ष अर्द्धमरुस्थलीय लाहुल-स्पीति के आम जनजीवन के घरेलू इस्तेमाल में महत्वपूर्ण किरदार अदा करता आ रहा है। वैसे स्थानीय व्यूंस को लाहुल-स्पीति के अलग-अलग घाटियों में अलग-अलग नामों से जाना जाता है, जैसे, जी-चंग, श्रेन तथा वोरचा। दूसरी प्रजाति जंगली तौर पर लाहुल की घाटियों में पाया जाता है जिसे अंग-चंग, वन श्रेन या श्रोअंग-चंग कहा जाता है।

जी-चंग (स्थानीय व्यूंस) जो कि सर्वाधिक प्रयोग में लाया जाता है, का कोई भी निश्चित प्रमाण उपलब्ध नहीं है कि हिमालय के इस क्षेत्र में सर्वप्रथम कहां से लाकर रोपा गया था। यूं तो व्यूंस की कुछ प्रजातियां लाहुल-स्पीति में हमें जंगली रूप में मिलते है, परन्तु जी-चंग प्रजाति कहीं भी लाहुल-स्पीति में जंगली तौर पर नहीं मिलता है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह प्रजाति लाहुल के बाहर से लाकर यहां रोपा गया था। यही प्रजाति लाहुल के पड़ौसी क्षेत्र पांगी जो कि लाहुल से कम ऊंचाई पर स्थित है, में जंगली तौर पर पाया जाता है। त्रिलोकनाथ के राणा के पास से मिले पांडुलिपि में जी-चंग के बारे ऐसा वर्णन किया गया है कि इसे कोई यायावर लाहुल में लेकर आया था।

जी-चंग को रोपित करने की विधि तथा देखभाल एक आवश्यक पहलू है। जी-चंग की शाख तराशी के पश्चाात स्वस्थ तथा मोटे (ढाई तीन इंच के लगभग) टहनियों का चुनाव किया जाता है। डेढ दो फुट गहरा गड्ढा खोदकर उसमें तीन चार टहनियों का गट्ठा बनाकर रोपा जाता है। नए रोपित पौधे को रोपने के पश्चात् हर नौवें या दसवें दिन सिंचाई की जाती है। यह क्रम लगभग दो या तीन वर्ष तक चलता रहता है। पशुओं से पौधे की सुरक्षा के लिए स्थानीय लोग पौधे के चारों और निरन्तर कांटे या पुराने कपड़े को लपेटते है। पशुओं द्वारा कभी पौधों की छाल को छिल देने पर सूखने से बचाने के लिए गोबर लेप दिया जाता है। कभी कभार गोबर न लेप पाने के कारण बाहरी टहनियां सुख जाती है तथा भीतरी गांठ हराभरा ही रहता है तथा भीतरी भाग समय आने पर फलने फूलने लगता है। दो तीन वर्ष पश्चात् इस वृक्ष की छाल कठोर हो जाने पर पशु वृक्ष को क्षति नहीं पहुंचा पाते हैं। वर्षा रहित तथा रेगिस्तानी इलाका होने के कारण स्पीति में इसे फलित करना तो कठिन अवश्य है, परन्तु कड़ी देखभाल तथा मेहनत से व्यूंस वृक्ष को फलित कर ही देते हैं। लाहुल स्पीति का वन विभाग जी-चंग को हर वर्ष बड़े पैमाने पर रोपित करता है लेकिन स्थानीय लोगों की अपेक्षा वन विभाग इसे उसी पैमाने पर कामयाब करने में असफल साबित हुई है। वह छोटी तथा पतली एकल टहनियों को गाड़ देते है जिसे पशु बड़ी आसानी से चबा देते है या छील देते है। ये कभी तो उखड़ भी जाती है और फलने फूलने के काबिल नहीं रहती है। पतली टहनी होने के कारण हर दूसरे या तीसरे दिन सिंचाई की आवश्यकता होती है। शायद वे अच्छी सिंचाई भी नहीं कर पाते है। यदि वन विभाग स्थानीय रोपण विधि को अपनाएं तो सरकारी बजट में कम खर्च के साथ अधिक लाभ, फले वृक्षों की सूरत में ले सकते है।

पर्यावरण संतुलन के लिए तथा वीरान लाहुल के जंगलों को हरा भरा बनाने में जी-चंग वरदान सिद्ध हो सकता है, ज़रूरत है वन अधिकारियों तथा कर्मचारियों के साथ-साथ स्थानीय लोगों को भी इस परियोजना में सम्मिलित किया जाए, तभी इस अर्द्ध मरुस्थलीय लाहुल-स्पीति के पहाड़ी ढलानों पर व्यूंस उगाकर हरा-भरा लाहुल और पर्यावरण के संतुलन को भविष्य में बचाए रखा जा सकेगा।

लाहुल-स्पीति के कुछ भागों अथवा गांवों में जी-चंग को देव वृक्ष की मान्यता भी दी गई है। तिन्नो, सारंग, अप्पर केलंग, लोअर केलंग, बिलिंग, ग्वाज़ंग (लाहुल में) तथा लालुंग (स्पिति में) इन वृक्षों की देव वृक्ष के रुप में त्यौहारों के अवसर पर विधिवत् पूजा की जाती है। यह देव वृक्ष आम जी-चंग की अपेक्षा आकार में बड़े होते है क्योंकि इन वृक्षों की शाख तराशी नहीं की जाती है, न ही इन वृक्षों को किसी प्रकार से क्षति पहुंचाई जाती है जी-चंग की शाख तराशी जनवरी से लेकर मार्च-अप्रैल माह तक होती रहती है। इस वृक्ष की रोपण अवधि अप्रैल या मई तक ही होती है। शाख तराशी के लिए 'माकुही' (छोटी कुल्हाड़ी) तथा 'दाच' (दराट) जैसे औज़ारों का

ही प्रयोग होता है। आम तौर पर इस वृक्ष की शाख तराशी हर तीसरे वर्ष आसानी से हो जाती है लेकिन लाहुल-स्पीति के कुछ ऊंचे तथा अत्यधिक ठण्ड वाले क्षेत्रों में चार या पांच वर्ष पश्चात इसकी शाख तराशी होती है। शाख तराशी के पश्चात जी-चंग वृक्ष का ऊपरी भाग छत्तानुमा सा दिखाई पड़ता है। धीरे-धीरे छत्तानुमा उपरी भाग फलने फूलने लगता है तथा तीन चार वर्ष के उपरान्त पुनः उसी रूप में फलित होता है।

पुराने समय में स्थानीय लोग इस की लकड़ी के बने विभिन्न प्रकार के उपयोगी बर्तनों का भी इस्तेमाल किया करते थे। जैसे वोति ढण्णु (छाछ छोलने के लिए मिटटी के बर्तन के स्थान पर इस्तेमाल करते हैं), 'जपटा' (जग), छुज़ोम (पानी के लिए लकड़ी की बाल्टी), अग रेन्डुडु (परातनुमा लकड़ी का बर्तन) ल्वाडू रेन्ड्रा (चिलड़ घोल्ने का बर्तन), लकड़ी की थाली तथा कई अन्य उपयोगी बर्तनों का निर्माण जी-चंग की लकड़ी से ही होता था। आज इन बर्तनों का प्रचलन काफी कम हो चुका है, क्योंकि आज बाज़ार में प्लास्टिक तथा एल्यूमिनियम के सस्ते बर्तन आसानी से उपलब्ध हैं। 80 के दशक तक जी-चंग की पतली टहनियों को बुनकर कमरों का विभाजन किया जाता था। अब सीमेंट के मकानों का चलन आरम्भ हो चुका है तथा विभाजन के लिए इस विधि का प्रयोग लगभग समाप्त हो चला है। कृषि के कुछ औज़ारों के लिए बिन्डे के तौर पर इस लकड़ी का प्रयोग किया जाता है और कृषि उत्पादनों व अन्य घरेलू कामकाज के लिए भी इसके नरम टहनियों से किल्टा बुनकर आम प्रयोग में लाया जाता है। लाहुल-स्पीति के आदिवासी लोग शताब्दियों से इसका दातुन के लिए प्रयोग करते है और इन लोगों में ऐसा विश्वास है कि इससे दांतों की कई प्रकार की बीमारियां नहीं हो पाती हैं। व्यूंस की जंगली प्रजातियों में मधुमक्खियों द्वारा शहद बनाने की प्रक्रिया चलती है, जिसे हम *'फ़ाल्स हनी'* भी कहते हैं। इसे बच्चे बड़े चाव से चाटते हैं। सर्दियों में पशुओं के चारे का अभाव होने के कारण घाटी के लोग जी-चंग के छिलके को पशु चारे का अच्छा विकल्प मानते हैं। इसकी शाख तराशी करने के पश्चात उसके छोटे-छोटे गट्ठे बनाकर पशुओं को खिलाया जाता है और टहनियों के छिलके को पशु छिल देते हैं। तत्पश्चात कठोर लकड़ियों का गट्ठा बना दिया जाता है। जी-चंग के छिलके को पशुओं के लिए स्वास्थ्य वर्द्धक तथा पौष्टिक माना गया है। छिले हुए कठोर लकड़ी के पूरी तरह सूख जाने पर इसे ईंधन के तौर पर इस्तेमाल में लाते हैं। व्यूंस की नरम लकड़ी शताब्दियों से लाहुली चूल्हों में एक आदर्श ईंधन साबित हुई है।

मोरावियन मिशनरी जो लाहुल में 19वीं शताब्दी के छठे दशक में आए थे, ने एक अन्य व्यूंस की प्रजाति मजनू *(वीपिंग विलो)* को भी रोपित किया, जो यहां के लिए बिल्कुल नया था। इसके अतिरिक्त लाहुल के ऊंचे स्थानों में *साइबेरियन विलो* (चंगकर) की प्रजातियां भी पाई जाती हैं। प्रायः लाहुल में दो प्रकार की प्रजातियों को ही लोग जानते हैं जिनका उल्लेख इस लेख में किया गया है। जी-चंग या श्रेन का वैज्ञानिक नाम *सैलिक्स ऑक्सीकारपा* है और वन श्रेन या रोअंग-चंग का *सैलिक्स निगरा* । व्यूंस की कई प्रजातियां क्रिकेट के बैट के लिए उपयोगी हैं, जिनमें कश्मीरी व्यूंस तथा इंगलिश विलो प्रसिद्ध नाम हैं। अगर इन प्रजातियों को घाटी में रोपित किया जाए तो आने वाले वर्षों में नई पीढ़ी के लिए रोज़गार का अच्छा साधन हो सकता है। (कश्मीरी व्यूंस घाटी के कुछ भागों में सफलतापूर्वक फल-फूल रही है)। व्यूंस कुहलों के किनारे, सड़कों के किनारे तथा खेतों के नज़दीक रिक्त पड़े स्थानों पर रोपने से स्थानीय निवासी कभी नहीं चूकते हैं।

तलाश

पंछी, चल मैं भी उड़ूं तेरे साथ
उड़ेंगे हम बादलों के ऊपर
उड़ेंगे हम हवा के साथ
शायद आसमान में मिले
हमें ऐसी दुनियां

जिस की हवा में घुटन न हो
दोस्ती की महक हो फ़िज़ा में
दुश्मनी की कसक न हो।
शायद आसमान में मिले
हमें ऐसी दुनियां

जहां बसने वालों के दिल
हों सफेद बालों की तरह
काली सोच के दायरे जहां न हो।
पंछी, चल मैं भी उड़ूं तेरे साथ!

– *एस० क्रोफा*

एक महान् विभूति से साक्षात्कार

- सोनम देव ठाकुर·

अतीत यादों का समूह है। वर्तमान यथार्थ है तथा भविष्य एक कल्पना मात्र। मै पाठकों को कुछ क्षणों के लिए अतीत की ओर ले चलता हूं जहां मुझे भारत ही नहीं अपितु विश्व के उस महान पुरुष से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

बात सन् 1958 की है, जब मैं राजकीय महाविद्यालय धर्मशाला से स्नातक की परीक्षा दे कर कुल्लू लौट आया था। कुल्लू अतीत काल से लाहुल घाटी के लिए प्रवेश द्वार रहा है। अत: लाहुल घाटी के प्रत्येक नर-नारी कुछ समय यहां व्यतीत कर के एवं घरेलू जीवन की कुछ आवश्यक वस्तुएं ले कर घर की ओर प्रस्थान करते थे। मै भी इसी परिस्थित में कुछ दिन के लिए कुल्लू रुका। उन दिनों लाहुल घाटी के लगभग 250 परिवार तिब्बत को व्यापार हेतु जाया करते थे। शताब्दियों से यह व्यापार निर्विघ्न चला आ रहा था। किन्तु सन् 1956 से तिब्बत पर लाल छाया का आतंक फैल रहा था। अर्थात् साम्यवादी चीन वहां अपना आधिपत्य जमाने के लिए कई हथकण्डे चला रहा था। अत: लाहुली व्यापारियों का भयभीत होना स्वाभाविक था। क्योंकि तिब्बत के क्षेत्रों में चीनी सैनिक भरे थे, जो कि उस समय के सर्वश्रेष्ठ हथियारों से लैस थे।

लाहुल तथा स्पीति घाटी के व्यापारियों ने अपनी सुविधा के लिए एक संगठन बनाया था जिसका नाम लाहुल-स्पीति इंडो-तिब्बतन वूल एण्ड पशमीना ट्रेड एसोसिएशन रखा गया था। चीनी सेना के भय से इस संगठन के सदस्यों ने उसी समय कुल्लू में एक आवश्यक बैठक का आयोजन किया। क्योंकि मै कुल्लू ठहरा हुआ था तथा मेरा परिवार भी इस संगठन का सदस्य था, अत: मुझे भी इस बैठक में भाग लेना पड़ा। बैठक में उन सदस्यों ने, जो हर वर्ष तिब्बत जाया करते थे, ने शंका ज़हिर की कि अब पुराने ढंग से व्यापार करना संभव नहीं हो पाएगा। उन्होंने चीनी सैनिकों द्वारा जान व माल का नुकसान पहुंचाए जाने की भी आशंका व्यक्त की। अत: काफी वाद-विवाद के बाद यह निर्णय लिया गया कि इस संगठन का एक प्रतिनिधि मण्डल दिल्ली भेजा जाए ताकि वे प्रधान मन्त्री से मिल कर तिब्बत की यथार्थ स्थिति की सूचना लें और उन से भली-भान्ति इजाज़त ले कर वापिस आएं।

प्रतिनिधि मण्डल में स्वर्गीय ठाकुर निहाल चन्द और स्व० ठाकुर अंगरूप (जाहलमां वाले) को चुना गया। क्योंकि वे दोनों उस समय पंजाब जनजातीय सलाहकार समिति के सदस्य थे। तीसरा सदस्य मुझे चुना गया। मुझे चुनने में सब ने रुचि इस लिए ली क्योंकि उपरोक्त दोनों सदस्य अधिक पढ़े-लिखे नहीं थे और साथ ही यह निर्णय भी लिया गया कि किसी भी समय कोई पत्र-व्यवहार की आवश्यकता पड़े तो मै उन की यथासम्भव सहायता कर सकूं। उन्हीं दिनों पंजाब सरकार ने यह निर्णय लिया हुआ था कि पंजाब से बाहर कोई भी व्यक्ति एक समय पांच सेर से अधिक अनाज नहीं ले जा सकता था। इस का विशेष कारण यह था कि उस समय पंजाब ही मात्र ऐसा राज्य था जो नई नहरों के बनने से सारे भारतवर्ष में अनाज की आपूर्ति करता था। परन्तु बहुत से स्वार्थी व्यापारी अपने निजी लाभ हेतु पंजाब से भारी मात्रा में अनाज की तस्करी करते थे। अत: यह आदेश जारी किया गया था। इस विषय में भी बैठक में विस्तार में चर्चा हुई। सभी सदस्यों का यह मत था कि तिब्बत जाने-आने में न्यूनतम तीन माह का समय लगता है, जिसमें एक व्यक्ति के लिए पांच सेर अनाज से गुज़ारा सर्वथा असम्भव था। अत: यह भी निर्णय लिया गया कि यही प्रतिनिधि मण्डल चण्डीगढ़ में पंजाब के तत्कालीन मुख्यमन्त्री से इस समस्या के समाधान हेतु भी मिलेंगे।

उन दिनों पंजाब के मुख्य मन्त्री सरदार प्रताप सिंह कैरों थे। हम तीनों जून माह के द्वितीय सप्ताह में चण्डीगढ़ की ओर रवाना हुए परन्तु जब वहां पहुंचे तो हमें पता चला कि मुख्यमन्त्री महोदय चायल गए हुए हैं। सौभाग्यवश हमें उसी दिन कुल्लू एवं कांगड़ा मण्डल के अधीक्षण अभियन्ता सरदार टोकी जी मिले। जब हमने उनसे अपनी समस्या की बात की तो वह तुरन्त हमें अपने जीप में चायल ले जाने के लिए तैयार थे। मै यहां पाठकों को यह स्पष्ट कर दूं कि कैरों जी के समय जनजातीय सलाहकार समिति के सदस्यों की इतनी धाक थी कि पंजाब के बड़े से बड़े अधिकारी भी उनकी बात को अनसुना नहीं कर सकते थे। हम तीनों चायल पहुंचे। मुख्यमंत्री उस

समय महाराजा पटियाला के चायल स्थित महल में विश्राम कर रहे थे। हमें उन्होंने तुरन्त मिलने का समय दिया तथा आने का कारण पूछा। हमने अपनी समस्या से उन्हें अवगत कराया। हमारी समस्या सुनकर उन्होंने निजी सचिव को उसी समय बेतार द्वारा लाहुल तथा लद्दाख के मध्य सभी चौकियों में यह आदेश जारी करवाने की आज्ञा दी कि व्यपारी जितना चाहे राशन ले जा सकते हैं तथा इस आदेश का सख्ती से पालन करने की आज्ञा दी। ऐसे गतिशील एवं कर्मठ थे सरदार प्रताप सिंह कैरों।

तत्पश्चात हम दूसरे दिन दिल्ली पहुंचे। जून का महीना था और गर्मी अपनी चरम सीमा पर थी। दिल्ली का तापमान 117° फ़ारनहाइट था। कुल्लू से चलते समय दिल्ली तक दुर्भाग्यवश हम ने कोई समाचार पत्र भी नहीं पढ़ा था। अत: हमें यह ज्ञात नहीं था कि प्रधान मन्त्री कहां हैं? तत्कालीन प्रधान मन्त्री महोदय पंडित जवाहर लाल नेहरू के पास विदेश मंत्रालय भी था, इसी कारण तिब्बत के मामले में उनसे व्यक्तिगत तौर पर मिलना अत्यावश्यक था। हमें केन्द्रीय सचिवालय से यह सूचना मिली कि प्रधान मंत्री महोदय पार्टी सेमिनार के सिलसिले में उटकमण्ड (उटी) गए हुए हैं। यह भी पता चला कि वह चार दिन बाद वापिस दिल्ली लौटेंगे। केवल सोमवार को कार्यालय में उपस्थित रहेंगे तथा मंगलवार को तीन दिन की यात्रा के लिए नेपाल भी जाने वाले हैं। यह सूचना उनके प्रधान सचिव खन्ना ने हमें दी। हमनें उनसे प्रार्थना की कि हमारा प्रधानमंत्री से मिलना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि हमारा मामला विदेश सम्बन्धी था। परन्तु उन्होंने समय के अभाव के कारण हमारी प्रार्थना को ठुकरा दिया। उन्हीं चार दिनों में हम विदेश सचिव श्री एस० दत्त से मिले। साथ-साथ हमने अतिरिक्त विदेश सचिव श्री जे०सी मेहता से भी मुलाकात की। उन्हीं के साथ-साथ हम अखिल भारतीय सीमा अधिकारी श्री पी०एन० कौल से भी मिले। इन सभी अधिकारियों ने इतने विस्तारपूर्वक एवं प्रेमपूर्वक हमें तिब्बत सम्बन्धी सूचनाएं दीं और कहा कि आप पहले की भान्ति ही व्यापार करने चले जाएं। हमनें प्रधान मंत्री से मिलने के लिए उनसे आग्रह किया। परन्तु सभी ने इसमें अपनी असमर्थता व्यक्त की। उन्होंने हमसे कहा कि इस मामले में आप लोग प्रधान सचिव श्री खन्ना से मिलें। जो पहले ही हमें इन्कार कर चुके थे।

इसी मध्य सचिवालय में हमें गृहमंत्री से मिलने का आश्वासन दिया। किन्तु उन्होंने हमें यह भी बताया कि वह उस समय अस्वस्थ है और अस्पताल में उपचाराधीन है। हमने कहा कि मामला विदेश मंत्रालय का है। अत: गृह मत्री से मिलने में हमें कोई विशेष लाभ नहीं होगा। इस पर उन्होंने भी सहमति प्रकट की। अन्त में हमारी स्थिति सचिवालय में भांप कर किसी अधिकारी ने मंत्रणा दी कि हम लोग प्रधान मन्त्री के दूसरे सचिव श्री युत श्रीनिवास से मिलें और हमें उन का दूरभाष नम्बर और पता भी दिया। हमने वापिस होटल आकर दूरभाष पर श्रीनिवास से अपनी व्यथा कही और उन्हें यथास्थिति से अवगत कराया। श्री निवासन तुरन्त ही हमारी समस्या को समझ गए और उन्होंने सुझाव दिया कि आप लोग प्रधान मन्त्री के व्याक्तिगत नाम पर डाकघर द्वारा पत्र भेजो तथा उस में अपना पता एवं दूरभाष नम्बर लिख भेजना। अत: उनके सुझाव अनुसार हमने प्रधान मन्त्री के व्यक्तिगत नाम एक प्रार्थनापत्र भेजा और उन से तिब्बत सम्बन्धी बात करने का आग्रह किया।

ठीक सोमवार की सुबह श्रीनिवासन ने फोन द्वारा हमें सूचित किया कि प्रधान मन्त्री महोदय उसी शाम को साढ़े पांच बजे हम से मिलना चाहते हैं। हम यह सुनकर अतिप्रसन्न हुए और ठीक शाम के 4 बजे होटल से केन्द्रीय सचिवालय के लिए हमने प्रस्थान किया। सर्वप्रथम हमें सुरक्षा कक्ष में ले गए तथा हम से मामूली परिचय लिया गया क्योंकि उन दिनों आज की भांति सुरक्षा के कड़े इन्तज़ाम नहीं थे। वह समय विकास एवं शांति का था। समस्त संसार में तीसरी दुनिया द्वारा पंचशील, जिसके जन्मदाता स्वयं पण्डित जवाहरलाल नेहरू थे, का भरपूर प्रचार हो रहा था। उस सुरक्षा कक्ष से हमें श्री युत श्रीनिवासन के कक्ष में ले गए। हमने अभिवादन किया तथा उन्होंने हमें एक सोफे पर बैठने का इशारा किया। उस समय उनका बहुत बड़ा कक्ष मिलने वालों से खचाखच भरा था जिनमें भारतीयों के अलावा बहुत सारे विदेशी भी नज़र आ रहे थे। ठीक साढ़े पांच बजे एक विदेशी आगन्तुक प्रधान मन्त्री के कक्ष से बाहर निकला और अब यह क्षण

हमारे मिलने का था। उसी समय अन्दर से दरवाज़ा खुला और स्वयं पण्डित नेहरू बाहर अतिथि कक्ष की ओर झांकने लगे। वहां उपस्थित आगन्तुक खडे हो गए और प्रधानमन्त्री का अभिवादन करने लगे। परन्तु उन्होंने किसी का उत्तर नहीं दिया और चारों ओर देखने लगे। जब उन की दृष्टि हम तीनों पर पड़ी तो उन्होंने सहृदयपूर्वक कहा "आप लोग अन्दर चले आइये।" हम उसी समय अन्दर चले गए और देखा कि उन का निजी कक्ष भी एक बहुत बड़ा कमरा था जिस में चारों ओर दीवार के साथ कुर्सियां लगी हुई थीं। उन का अपना मेज गोल था जिस के साथ भी कुर्सियां लगी हुई थीं। वे अपने आसन की ओर चले गए और अपनी मेज के साथ ही सटी कुर्सियों पर बैठने को कहा।

हम जैसे ही कुर्सियों पर बैठे थे कि नेहरू जी अपने आसन से उठे और हम भी आदरवश अपने-अपने स्थान पर खड़े हो गए। वह मेज़ के किनारे से हमारी ओर बढ़े और बड़े प्रेमपूर्वक हम तीनों से दोनों हाथ मिलाए। वास्तव में उनका मेज इतना चौड़ा था कि मेज़ के आर-पार हाथ मिलाना संभव नहीं था और साथ ही कमरे में प्रवेश करते समय वह हाथ मिलाना भूल गए थे। अतः वह महान् व्यक्ति शिष्टाचार को नहीं भूले थे। तत्पश्चात् स्वयं बैठते समय हमें भी बैठने को कहा। अभी हमने वार्तालाप आरम्भ भी नहीं की थी कि बाहर का दरवाज़ा खुला और तत्कालीन रक्षा मन्त्री श्री कृष्णा मेनन कुछ नौसेना के अधिकारियों के साथ कमरे में प्रविष्ठ हुए। हम तीनों ने उनका अभिवादन किया। इतने में प्रधान मन्त्री जी ने हमें कहा कि आप लोग पांच मिनट इन्तज़ार करें, तब तक मै इन से बातचीत कर लूं। उसी समय रक्षा मन्त्री श्री मेनन ने प्रधान मन्त्री को अंग्रेज़ी भाषा में बताया कि ये नौसेना के अधिकारी नंदादेवी चोटी पर विजय प्राप्त करके लौटे है। नौसेना दल के मुख्य कमाण्डर श्री कोहली थे। मेरे साथ स्वर्गीय ठाकुर अंगरूप खड़े थे; उन्होंने रक्षा मन्त्री की वेशभूषा को देखकर हम दोनों से लाहुली बोली में फुसफुसाए कि यह कोई महान् साधु लगता है। मैंने जवाब दिया कि यह व्यक्ति हमारे रक्षा मन्त्री कृष्णा मेनन है। श्री मेनन सदा धोती व कुरता पहना करते थे। इसी कारण ठाकुर अंगरूप ने उन्हें साधु ही समझा। उन्होंने कोई दस मिनट का समय लिया जिस में समाचार पत्र वाले एवं सूचना-प्रसारण मन्त्रालय के कर्मचारियों ने फिल्म हेतु उन के फोटो आदि लिए। फिर उन्होंने वहां से प्रस्थान किया। उस के बाद प्रधान मन्त्री महोदय से बातचीत करने में हमें 40 मिनट लगे।

इन 40 मिनटों के समय में श्री नेहरू ने लाहौल-स्पीति के सभी पहलुओं के बारे में जानना चाहा। तिब्बत में कहां-कहां जाते है और किस मार्ग से होकर जाते है? इन सब बातों की जानकारी उन्होंने हम से ली। हमने पंडित जी से विनम्र आग्रह किया कि वह हमें तिब्बत जाने की अनुमति प्रदान करें तथा चीन सरकार से हमारी सुरक्षा के बारे में भी बात करें। इस पर नेहरू जी ने चीन सरकार से बात करने को साफ इन्कार किया। कारण उन्होंने यह बताया कि चीन तो हमारा भाई है और अभी तक तिब्बत तथा किसी अन्य प्रदेश में भारतीयों के साथ चीन ने बदसलूकी नहीं की है। और नेहरूजी के मतानुसार यदि वे चीन से लाहौल के व्यापारियों की सुरक्षा की बात करें तो चीन ऐसा सोचेगा कि भारत के दिल में खोट है। ऐसे थे वे महान् व्यक्तित्व जो दिल से पंचशील के सिद्धान्त को मानते थे। अंत में उन्होंने हमें आदेश दिया कि हम लोग गत वर्षों की भान्ति ही व्यापार करने उन्हीं स्थानों पर जाएं जहां पहले जाया करते थे, साथ ही यह भी कहा कि वहां जा कर किसी प्रकार की जासूसी न करें। उन से बड़ा साफ दिल, नेक और सच्चा मित्र शायद ही संसार में कोई दूसरा नेता मिले। मै व्यक्तिगत तौर पर यह समझता हूं कि यदि कोई दूसरा नेता होता तो वह हमें यह कहता कि हमें व्यापार के साथ-साथ चीनियों की गतिविधियों का भी पता लगाते रहना।

मै इस लेख में 40 मिनट में हुई बातों को लिखना व्यर्थ समझता हूं। अंत में हमने नेहरू जी से विनम्र निवेदन किया कि जब आप मनाली पधारे थे तो आपका तीन दिन के लिए लाहुल घाटी में आने का भी कार्यक्रम था और लोग आपके दर्शनों के लिए लालायित थे। हमने निवेदन किया कि वे पुनः एक बार दर्शन देकर लाहुल वासियों को अनुगृहीत करें। इस पर उन्होंने कहा कि

(शेष पृष्ठ 36 पर)

वयोवृद्ध चित्रकार श्री सुखदास का सम्मान

जन जातीय उत्सव-97 तथा भारतीय स्वतन्त्रता के स्वर्ण जयन्ती समारोह के शुभ अवसर पर लाहुल के वयोवृद्ध चित्रकार श्री सुखदास को शाल एवं टोपी भेंट देकर ज़िला प्रशासन द्वारा सम्मानित किया गया। इस अवसर पर उनकी कलाकृतियों की प्रदर्शनी भी आयोजित की गई।

- अजय

हि०प्र० प्राकृतिक आपदाओं से त्रस्त

पहाड़ी प्रांत हिमाचल जहां सीमित आय वाला साधन-विहीन राज्य है वहीं आए दिन कहीं भूकम्प व भूस्खलन हो रहा है और कहीं बादल फटने व बाढ़ जैसी त्रास्दी के प्रकोप से दो चार होना पड़ रहा हैं और ऊपर से केन्द्रीय सरकारों द्वारा अपनाई रही उदासीन नीतियां भी राज्य के व्यापक विकास में बाधक बन रही हैं। जो अपनी तीन दिवसीय हिमाचल यात्रा के अन्तर्गत श्री गुजराल के स्वागत में रखी गई विशाल रैली के उपलक्ष में दिए उनके अध्यक्षीय भाषण में इस बात की सहमति की झलक मिली थी कि हिमाचल सरकार द्वारा केन्द्र के समक्ष रखी गई 800 करोड़ की मांग सैद्धान्तिक रूप से जायज़ है। फिर भी इसे प्राप्त करवाने में देरी हो रही है। अगस्त 18 व 19 के दो दिन केन्द्रीय कृषि मंत्रालय के संयुक्त सचिव श्री मोहन कांडा की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय सर्वेक्षण दल बाड़ तथा आपदाओं से प्रभावित क्षेत्रों का निरीक्षण कर रही है। वैसे अब जब केन्द्रीय सर्वेक्षण दल 1995 तथा 1997 में आई भीषण बाढ़ों से हुई अभूतपूर्व क्षति का निरीक्षण, जो कुल मिलाकर पन्द्रह अरब से कहीं ज्यादा का आंका गया है, कर रही है, क्या इस बार केन्द्र उदारता का परिचय देते हुए आर्थिक सहयोग देगा यह भी देखने की बात है।

सन् 1995 से 1997 तक हिमाचल भर में हुई भारी जान माल की क्षति जो इस दशक में हुई अब तक की अभूतपूर्व क्षति कही जाएगी इसी के स्थितिगत केन्द्र को, चाहिए कि वे बिना भेदभाव के और मानवीय दृष्टिकोण के आधार पर इस प्रान्त को हर सम्भव आर्थिक सहायता पूरी उदारता से उपलब्ध करवाए। एक अन्य त्रासदी पूर्ण घटना की जानकारी यहां प्राप्त हुई, जो 17 अगस्त रात्रि निरमण्ड तहसील के अन्तर्गत आनी डीग पंचायत में उस समय घटी जब यहां बादल फटने से आई भयंकर बाढ़ ने अपने क्रूर वेग में करीब 400 भेड़-बकरियां, 16 पुल, 25 मकान, 18 पन चक्की मिलें (घराट) लगभग 50 लाख की लागत से बनी नहरें (कुहलें) तथा करीब अढ़ाई करोड़ की लागत से बने छोटे-बड़े मार्गों को भारी रूप से क्षतिग्रस्त कर दिया। सूत्रों ने बताया है कि लगभग 125 मकानों को भी इस भयंकर बाढ़ ने आंशिक रूप से क्षति पहुंचाई है। हि०प्र० सरकार के मुख्य सचिव श्री ए०एन० विद्यार्थी के अनुसार हाल ही किन्नौर और शिमला ज़िले में हुए प्राकृतिक आपदाओं के बेरहम हाथों ने लगभग 182 निर्दोषों को मौत के आगोश में लेते हुए सैकड़ों परिवारों के ऊपर बज्रपात किया है तथा वहीं 124 लोग भीषण बाढ़ों तथा भू-क्षरण के मलबे में दब कर लापता हुए है। श्री विद्यार्थी से प्राप्त जानकारी के आधार पर अब तक करीब 57 शव मलबे तथा बाढ़ के पानी के घटते स्तर से बरामद किए जा चुके हैं। इसी तरह 1113 मवेशियों के बाढ़ में बह जाने की अधिकारिक सूचना है तथा 4207 मकान व गौशालाएं अब तक पूरी तरह क्षतिग्रस्त हो चुके है। श्री विद्यार्थी ने कहा है कि प्रभावित क्षेत्रों में आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति पूरी तरह सुचारू एवं संतोषजनक है तथा रिकोंगपिओं बाया मनाली काज़ा मार्ग से गैस, पैट्रोल, डीज़ल तथा अन्य आवश्यक सामग्री को लेकर ट्रक रवाना कर दिए गए है। सीमा सड़क संगठन के महानिदेशक से व्यक्तिगत आग्रह में श्री विद्यार्थी ने कहा कि संगठन के अधिकार क्षेत्र में क्षतिग्रस्त सभी मार्गों का निरीक्षण करवाकर यथा शीघ्र सुधारा जाए। अन्त में केन्द्र सरकार से यही उम्मीद है कि वे अब तक की क्षति से अवश्य पसीज जाएंगे तथा इस प्रान्त को हर सम्भव सहयोग देंगे। *सांख्यायन*

ट्राईफ़ेड लाहुल हॉप्स उत्पादकों की मदद में

ट्राईफ़ेड द्वारा हॉप्स उत्पादकों का पिछला व वर्तमान प्रोसेस्ड उत्पाद खरीदने का निर्णय लेने के बाद लाहुल हॉप्स सोसायटी ने राहत की सांस ली और हॉप्स उत्पादक फिर से हॉप्स लगाने की सम्भावनाओं पर विचार कर रहे है।

(पृष्ठ 34 का शेष 'एक महान् विभूति..')

उनके पास समय का अभाव है और कहा कि वे वहां आने का आश्वासन दे सकते हैं। किन्तु वायदा नहीं कर सकते। ऐसे थे वे भारत के सच्चे सपूत जो आम आदमी से भी मन की बात कहते थे। तत्पश्चात उनका धन्यवाद कर हम वहां से उठ पड़े। वह स्वयं अपने कक्ष से दरवाज़े तक हमें छोड़ने आए और कहा कि प्रचण्ड गर्मी से बचने के लिए तुरन्त अपने घर चले जाएं। उस वाक्य के समाप्त होते ही दरवाज़े के समीप खड़े ठाकुर निहाल चन्द ने मेरी ओर ईशारा करते हुए पंडित जी से कहा कि यह तो तीन दिन पहले ही कह रहे थे कि आप से मिलने से पहले ही हम प्रचण्ड गर्मी से स्वर्गलोक पहुंच जाएंगे। इस पर नेहरू जी ने इतनी ज़ोर से ठहाका लगाया कि वातावरण खुशनुमा हो गया और एक दम से मुझे बहुपाश में ले लिया। पीठ पर थपकी देते हुए उन्होंने मुझ से कहा 'नौजवान, गर्मी से नहीं घबराना चाहिए, और हां... तुरन्त अपने स्थानों को लौट जाओ।'

भारत के इस .सपूत को जिसे बड़े भाई चीन पर अत्यधिक भरोसा था, ने सन् 1962 में उसी की पीठ पर छुरा घोंपा और आघात पहुंचाया। तभी से नेहरू जी राजनीति के पथ पर ठीक ढंग से चल नहीं सके। वे शारीरिक एवं मानसिक तौर पर अस्वस्थ रहने लगे। 27 मई, 1964 को सदा के लिए भारत छोड़कर ब्रह्म में विलीन हो गए। मै उन दिनों "टाटा इन्सटीटयूट ऑफ सोशल साईंस" बम्बई में, जनजातीय कल्याण एवं प्रशासनिक डिप्लोमा कोर्स की ट्रेनिंग ले रहा था। फील्ड ट्रेनिंग हेतु मैं मध्य प्रदेश के ज़िला छिंदवाड़ा के 'तामीयां खंड विकास' के एक छोटे से गांव छिंदी में कार्यरत था। जब 27 मई को पंडित नेहरू जी की मृत्यू का समाचार सुना तो अनायास ही मेरी आंखों से अश्रुधारा बह चली और मेरे साथ-साथ दूसरे अधिकारी भी रोने लगे। ऐसा था उस महान् सपूत के साथ लोगों का अगाध प्रेम और श्रद्धा। जब हम वापिस बम्बई गए तो प्रथम दिन हमारी कक्षा में हमारे विभागाध्यक्ष डॉ०वी०एच० मेहता जो कि स्वयं एक बहुत बड़े बुद्धिजीवी और जनजातीय कल्याण हेतु योजना आयोग के सलाहकार थे, साथ ही भारत की ओर से अन्तर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ के सदस्य थे। उन्होने कक्षा में आते ही बड़े गमगीन शब्दों में हम से कहा कि "आज अनुसूचित जाति, जनजाति एंव गरीबों का मसीहा चला गया है, जो मन से उन के उत्थान के बारे सोचता था और उस को कार्यशील बनाने में हमेशा तत्पर रहता था।"

डॉ० मेहता के शब्दों में, "अब ऐसा राजनीतिज्ञ भारत को शायद ही मिलेगा," सत्य प्रतीत होता है। आज के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक नेताओं का मुकाबला नेहरू जी से करें तो सब बौने लगते हैं और पण्डित जी कितने कद्दावर थे! तभी तो किसी कवि ने सच ही कहा है:

करती है यह धरती
फरियाद हज़ारों साल,
तब जाकर पैदा होता
एक जवाहर लाल।

लाहुल-स्पीति लोककला, साहित्य, संस्कृति संरक्षण फण्ड

जैसा कि सभी को विदित है कि "स्वंगला एरतोग", लाहुल स्पीति की कला, साहित्य व संस्कृति के उत्थान हेतु एक रजिस्टर्ड सोसाईटी है। जो सोसाईटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट, 21, 1860 के अन्तर्गत रजि० संख्या ल स/42/93 ज़िला मुख्यालय केलंग में पंजीकृत है। आप सभी जानते है कि ये लाभ रहित व स्वैच्छिक संस्था है और लाहुल स्पीति की लुप्त हो रही लोक कला, साहित्य व संस्कृति के संरक्षण और उसे पुनर्जीवित करने में लगी है, इस पुनीत कार्य में समाज के सभी लोगों से निवेदन है कि यथाशक्ति अपना योगदान दें। हर अंक में हम लाहुल स्पीति लोक कला, साहित्य व संस्कृति संरक्षण फण्ड के तहत सभी दानी सज्जनों का नाम, दान और जमा खर्चे का लेखा जोखा देते है।

क्र०	नाम	राशि
1.	श्री टाशी दोरजे गांव ठोलंग, लाहुल	1,000.00
2.	श्री अजेय कुमार गांव सुमनम, लाहुल	500.00
3.	श्री शिव दास, उदयपुर	500.00
4.	पूर्व एकत्र	2,800.00
	कुल योग	4,800.00

अध्यक्ष, फण्ड कमेटी,
लाहुल स्पीति लोक कला,
साहित्य व संस्कृति संरक्षण फण्ड,
पोस्ट बॉक्स नं० 25,
मुख्य डाक घर, ढालपुर,
कुल्लू 175 101

स्वंगला एरतोग

उद्देश्य :

1. सांस्कृतिक विरासत को संजोना व संकलित करना व उन्हें प्रकाश में लाना, पुनर्जीवित व संवर्धित करना।

2. लोक विधाओं को चिह्नित करना जो लुप्त होने के कगार पर है।

3. साहित्यिक रुचियों का विकास व सृजन के प्रति रुझान पैदा करना।

4. सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक उत्थान के लिए एक मंच बनाना जहां विचारों का सम्प्रेषण एवं जन प्रतिक्रिया का आकलन संभव हो।

स्वंगला एरतोग

लाहुल-स्पीति में कला व संस्कृति उत्थान हेतु सोसाइटी (रजि०)

पोस्ट बॉक्स 25, मुख्य डाकघर ढालपुर, कुल्लू 175 101 (हि०प्र०) भारत

सोसाइटीज़ रजिस्ट्रेशन एक्ट 21,1860 के अधीन पंजीकृत संख्या ल०स०/42/93

स्वंगला एरतोग सोसाईटी रजि० के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक सतीश कुमार द्वारा नमन, कुल्लू से टाईप सेटिंग तथा मुद्रित एवं (नीरामाटी) कुल्लू, से (हि०प्र०) से प्रकाशित। संपादक सुश्री छिमे शाशनी। पंजीयन संख्या - 65373/94.